दरिद्रता की देवी
धूमावती साधना

विषय सूचि

दरिद्रता की देवी धूमावती

इस महाशक्ति का कोई पुरुष न होने के कारण यह 'विधवा' कही जाती है। यह दरिद्रता की देवी है। संसार में दुःख के मूल कारण - रुद्र, यम, वरुण ओर निऋति-ये चार देवता है। इनमें निऋति ही धूमावति है। प्राणियों में मूर्छा, मृत्यु, असाध्य रोग, शोक, कलह, दरिद्रता आदि वहीं नित्राति-धूमावती उत्पन्न करती है। मनुष्यों का भिखारी पन् पृथ्वी का क्षत-विक्षत होना, ऊसर पन, बने बनाए भवनों का ढह जाना, मनुष्य को पहनने के लिए फटे पुराने वस्त्र भी न मिलने की स्थिति, भूख, प्यास और रुदन की स्थिति, वैधव्य पुत्रशोक आदि महादुःख, महाक्लेश, दुष्परिस्थितियां - सब धूमावती के साक्षात रूप है।

शतपथ ब्राह्मण घोरपाप्पा वै नैऋतिः कहकर इस शक्ति को दरिद्रा कहता है। इसी को शांत करने के लिए 'नेऋत यज्ञ किया जाता है। जिसे वेदों में नैऋति इष्ट' कहा गया है। नैऋति शक्तियां वेसे तो सर्वव्याप्त रहती है। किन्तु ज्येष्ठा नक्षत्र इनका प्रधान केन्द्र है। ज्येष्ठा नक्षत्र से यह आसुरी, कलहप्रिया शक्ति धूमावती निकली है। यही कारण है कि ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न व्यक्ति जीवन भर दरिद्रय-दुख को भोगता है। धूमावती मनुष्यत्व का पतन करती है, इसलिए इसे 'अवरोहिणी' कहते है। वहीं लक्ष्मी नाम से भी प्रसिद्ध है।

वैदिक साहित्य में 'आप्य प्राण' को असुर और ऐन्द्र प्राण को देवता कहा गया है।

अषाढ़ शुद एकादशी से वर्षा ऋतु आरंभ होकर कार्तिक शुद एकादशी को समाप्त होती है। यही वर्षा ऋतु की परम अवधि

ज्योतिष शास्त्र ने बताई है। आषाढ़ शुद से कार्तिक शुद तक इन चार महिनों में पृथ्वी पिण्ड और सौर प्राण 'आरोमय रहता है। चातुर्मास्य में नैत्रऋति का साम्राज्य होने से लोक और वेद के सभी शुभ काम इन चार महीनों तक वर्जित

रहते हैं। संन्यासी भ्रमण त्याग कर एक स्थान पर चातुर्मास्य व्रत करता हुआ स्थित हो जाता है। इसीलिए ये चार मास देवताओं के 'सुषुप्ति काल माने जाते हैं। देवता सोते रहते है। कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी इसकी अन्तिम अवधि है, इसलिए इसे नरक चौदस कहा जाता है। नरक चतुर्दशी के दिन दरिद्रारूपा लक्ष्मी का गमन होता है और दूसरे ही दिन अमावस्या को रोहिणी रूपा कमला (लक्ष्मी) का आगमन होता है।

कार्तिक कृष्ण अमावस्या को कन्या राशि का सूर्य रहता है। कन्या राशिगत सूर्य नीच का माना जाता है। इस दिन सौर प्राण मलिन रहता है। और रात में तो वह भी नहीं रहता है। इधर अमावस्या' के कारण चन्द्र ज्योति भी नहीं रहती और चार मास तक की बरसात से प्रकृति की प्राणमयी अग्नि ज्योति भी निर्बल पड़ जाती है। इसलिए तीनों ज्योतियों का अभाव हो जाता है। फलतः ज्योतिर्मय आत्मा इस दिन वीर्यहीन हो जाता है। इस तम भाव को निरस्त करने के लिए साथ ही लक्ष्मी के आगमन के उपलब्ध में ऋषियों ने वैध प्रकाश (दीपावली) और अग्नि कीड़ा (फूलझड़ी, पटाखे) करने का विधान निष्कर्ष यह कि नैतिरूपा धूमावति शक्ति का प्राधान्य वर्षा काल के चार महीनों में बनाया है।

शक्ति-रहस्य

'श-नाम ऐश्वर्य का और शक्ति-नाम पराक्रम का है एवं ऐकार्य-पराक्रम स्वरूप और दोनों को प्रदान करनेवाली को शामित्त कहते है। इसी आदि-शक्ति प्रकृति-देवी की विकृति ही जगत है। अब जिस प्रकार प्रकृति अपने विकृति रूप जगत् की रचना करती है, यह सदोष में प्रकृति-शब्द के अर्थ द्वारा दर्शाया जाता है।

" का अर्थ प्रकृष्ट (उत्कृष्ट) और 'कृति का अर्थ सृष्टि है एवं जो सृष्टि रचने में प्रकृष्ट को उसे प्रकृति कहते हैं। यह प्रकृति का तटस्थ लक्षण है। प्र शब्द प्रकष्ट सत्वगुण में रहता है, यह प्रकृति का स्वरूप-लक्षण है जैसा कि सांख्यशास्त्र में प्रतिपादन किया है-- 'सत्वरजस्तमसां साभ्या वस्था प्रकृतिः। इन तीन गुणों के द्वारा ही तीन देवताओं को अर्थात् सत्य से विष्णु को रज से ब्रह्मा को और तम से रुद्र को उत्पन्न कर भगवती जगत का पालन, उत्पत्ति और लय करती है।

इस विषय को बावृयोपनिषद् में इस प्रकार वर्णन किया गया है। 'सृष्टि के आदि में एक देवी ही थी, उसने ही ब्रह्माण्ड उत्पन्न किया उससे ही ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र उत्पन्न हुए । अन्य सब कुछ उससे ही उत्पन्न हुआ। यह ऐसी परा-शक्ति

है। प्राधानिक रहस्य में लिखा है-

ब्रह्मा, विष्णु और महेश अपने अर्धांगीभूत त्रिविध शक्ति-सरस्वती, लक्ष्मी और गौरी की सहायता से जगत का जनन, पालन और लय बरते हैं। न हि क्षमस्तथात्मा च सृष्टिं राष्टुं तया बिना। 'बिना शक्ति के आत्मदेव सृष्टि रचना नहीं कर सकते।

तया युक्ताः सदात्मा च भगवांस्तेन कथ्यते।

स च स्वेच्छामयो देवः साकारश्च निराकृतिः।।

'ज्ञान, समृद्धि, सम्पत्ति, यश और बलवाचक भग' शब्द युक्त भगवती से संयुक्त होने से आत्मा का नाम भगवान् है: स्वेच्छामय होने से भगवान कभी आकार और कभी निराकार होते है।

इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।

तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षम्।।

वही जगदम्बा 'जब-जब दानवजन्य बाधा उपस्थित होगी तब-तब मै अवतीर्ण हो दुष्टों का नाश करूँगी-अपनी इस प्रतिज्ञानुसार समय-समय पर दुर्गा भीमा, शाकम्भरी आदि नामों से अवतार लेकर जगत् का क्षेम करती है एवं देव-देवी, स्त्री-पुरुष आदि स्त्री पुरुष भेद से, तथा-अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि में पराम्।-परा और अपरा प्रकृति अर्थात् जड़-चेतन-भेद से दृश्य मान समस्त शक्ति का ही विलास है। इस प्रकार शक्ति के सगुण रुप का दिग्दर्शन कर अब संक्षेप में उसके गुणातीत स्वरुप का वर्णन किया जाता है।

एकमेवाद्वितीयं यद् ब्रह्म वेदा वदन्ति ।

सा किं त्वं वाप्यसौ वा किं सन्देहं विनिवर्तय।।

'जिसे वेद एक-अद्वैत ब्रह्म कहते हैं, वह तुमसे भिन्न है य तुम्ही ब्रह्म हो इस सन्दर को निवृत्त करो। इस प्रकार ब्रह्मा जी के प्रश्न करने पर भगवती ने उत्तर दिया-

सदैकत्वं न भेदो'स्ति सर्वदैव ममास्य च।

यो सौ साहमहं यो सौ मेदोस्ति खलु विभ्रमात् ।।

'मैं और ब्रह्म सदा एक है, हममें भेद नहीं है; जो वह है, सो मैं हैं, जो मैं हूं सो वह है, हममें भेद भ्रम से भासता है।

स्वशक्तेश्च समायोगादहं बीजात्मतां गता।

सर्वस्यान्यस्य मिथ्यात्वादसंगत्वं स्फुअ। मम ।।

'स्वशक्ति के योग से मेरा (ब्रह्म का) जगत्कारणत्य सिद्ध है। वस्तुतः जगत् का मिथ्यातत्व होने से मेरा असंगत्व स्पष्ट है। यह मेरा अलौकिक रूप है।

तांत्रिक साधनाओं का रहस्य

तंत्रशास्त्र में ये दस तांत्रिक साधनाएं परमोच्य स्थान तो रखती ही है साथ ही सृष्टि, तत्व विज्ञान, पदार्थ विज्ञान भी इन विद्याओं में निहित है। दस तांत्रिक साधनाओं का रहस्य गहन, गंभीर और निगूढ़ है। देवियों के रूप में दस तांत्रिक साधनाओं को क्रमशः

(1) काली (2) तारा (३) षोडशी (4) भुवनेश्वरी (5) भैरवी (6) छिन्नमस्ता (7) धूमावती (8) बगलामुखी (९) मातंगी और (10) कमलात्मिका प्रसिद्ध है और इनकी

उत्पत्ति कथा भी नारद पाश्चरात्र स्वतंत्र तंत्र, कालिका पुराण, देवी भागवत आदि तांत्रिक साधना पौराणिक ग्रंथों में मिलती है, किन्तु जब हम वैज्ञानिक सार्वभौम दृष्टिकोण से दस तांत्रिक साधनाओं के रहस्य पर विचार करते है तो वैदिक वाङ्मय के आधार पर विस्तृत व्यापक रहस्य बोध होता है।

विद्या-आगम का आगमन निगम से होने के कारण आगम के संपूर्ण सिद्धांत निगम पर निर्भर है। निगम में त्रयी ब्रह्मा', 'त्रयी विद्या और वेदत्रयी रूप से ब्रह्मा, विद्या और वेद को परस्पर अभिन्न माना गया है। आध्यात्मिक दृष्टि से तीनों अभिन्न है, किन्तु भौतिक दृष्टि से तीनों भिन्न है । विश्वसृष्टि से वेद, ब्रह्मा और विद्या इन तीनों तत्वों का ही आधिपत्य है। शब्द ब्रह्मा वेद तत्व है। विषय ब्रह्मा ब्रह्म तत्व है और संस्कार ब्रह्म विद्या तत्व है। शब्द को सुनकर भी बोध होता है और पदार्थ को देखने पर भी ज्ञान होता है। शब्द सुनने से शब्दाकार का ज्ञान होता है, पदार्थ देखने से तदाकार ज्ञान होता है इसलिए शब्द विषय भेद से ज्ञान दो प्रकार का होता है। जो ज्ञान शब्द पर निर्भर होता है. उसे वेद कहते है और जो ज्ञान विषयच्छित होता है, उसे ब्रह्म कहते है। वेद और ब्रह्म के अतिरिक्त एक और ज्ञान होता है। शब्द सुनने से और विषय देखने से जो सामान्य ज्ञान होता है. यही आगे चलकर जब विशेष रूप से परिणत हो जाता है, तो उसे संस्कार

कहते हैं। शब्द और विषय दोनों ही सामान्य उत्पन्न कर विलीन हो जाते हैं, किन्तु वही सामान्य ज्ञान आगे चलकर जब अनुभव द्वारा विशेष भाव को प्राप्त करता हुआ आत्मा में अंकित हो जाता है तो दार्शनिक भाषा में उसे अनुभवाहित संस्कार कहते हैं। वैज्ञानिक परिभाषा में इसी को विद्या या साधना कहा जाता है। इसी से भविष्य का व्यवहार मार्ग

चलता है।

जब तक संस्कार है तभी तक कोई स्व-स्वरुप में प्रतिष्ठित है और संस्कार का अभाव होने पर यह विश्वातीत और मुक्त है। विश्व की संपूर्ण सत्ता संस्कार सत्ता पर टिकी हुई है। अतएव शब्द रुप वेद और विषय रुप ब्रह्मा की अपेक्षा संस्कार रुप विद्या ही विश्व की विधायिका है। उसी विद्या ज्ञान पर चितिक्रम से संस्कार पुट लगने से विश्व बनता है। जैसे हमारा विश्व हमारा संस्कार है, वैसे ही यह महाविश्व उसका संस्कार है। अतएव विश्व विद्यारुप है। संस्कारावच्छित होता हुआ वह ज्ञान मूर्ति विद्या है। शब्दावच्छित होता हुआ वही वेद है और विषयावच्छित बनकर यही ब्रह्म है। उपर्युक्त विश्लेषण से सिद्ध है कि सृष्टि का संबंध विद्या से है। निगम और आगम दोनों विश्व का निरूपण करते हैं, इसलिए ये दोनों विद्या नाम से प्रसिद्ध हुए। सूर्य, चन्द्र, ग्रह-नक्षत्र, औषधि, वनस्पति

धातु, रस, विष, कृमि, कीट, पशु, पक्षी, मनुष्य आदि प्रत्येक पदार्थ एक-एक विद्या है।

विश्व के अंतर्गत ये सब क्षुद्र विद्या है और संपूर्ण विश्वविद्या महाविद्या है। इसी को महाविश्वविद्या भी कहा जाता है। इस महाविद्या को ऋषियों ने दस भागों में बांटा है। निगम में दस अवयव वाली विद्या विराट विद्या के नाम से प्रख्यात है। आगमशास्त्र ने दसमहाविद्याओं के द्वारा विश्व कैसे उत्पन्न हुआ? उत्पन्न विश्व का क्या स्वरुप है उस विश्व विद्या को समझने से क्या लाभ हैं ? उनकी उपासना से क्या उपलब्धि होती है? इत्यादि प्रश्नों का समाधान किया है।

दस तांत्रिक साधनाओं की दस संख्या का रहस्य- विश्व की सृष्टि पुरुष और प्रकृति के समन्वय से हुई है। दर्शनशास्त्र उस पुरुष के 'काल' एवं यज्ञ भेद से दो विवर्त मानता है। कालपुरुष व्यापक है आदि है और यज्ञ पुरुषसादि से सीमित है। व्यापक काल पुरुष का ही थोड़ा सा प्रदेश सीमित होकर यज्ञ पुरुष कहलाता है। सृष्टि का प्रथम प्रवर्तक काल पुरुष है और काल पुरुष का आश्रय लेकर यज्ञ पुरुष विश्व रचना में समर्थ होता है। यजुर्वेद और उपनिषदों के अनुसार उस महाकाल के उदर में अनन्त विश्व-चक्र

घूम रहे हैं। यजुर्वेद में जिस तत्व को 'काल' कहा गया है, उपनिषद् उसे परात्पर कहती है। शतपथ ब्राह्मण परात्पर को सर्वमृत्युधन अमृत्व कहता है। अमृत्व सत्य है और मृत्युतत्व असत् है-

अन्तरं मृत्योरमृतं मृत्यावमृतमाहितम् ।

तदन्तरस्य सर्वस्य तदुसर्वस्याबाह्यतः।

यजुर्वेद के इस कथन के अनुसार दोनों एक दूसरे में ओत-प्रोत हैं । एक निरंजन, निर्गुण, शांत, शाश्वत और अभय है। पूर्ण मृत्यु लक्षण है तो दूसरा सज्जन, सगुण अशांत, अशाश्वत, समय और स्वलक्षण है। वस्तुतः दोनों में से एक सत् है. उसका कभी विनाश

नहीं होता है। दूसरा असत् है और विनाश उसका स्वरूप है। तात्पर्य यह कि सत् असत् रूप अमृत-मृत्यु की समष्टि ही कालपुरुष है। इसी असीम परात्पर में प्रतिक्षण विलक्षण धर्म

वाली माया की शक्ति का उदय होता रहता है। वही माया बल उस असीम कालपुरुष को ससीम बना देता है, जिसके प्रभाव से वह विश्वातीत, विश्वकार और विश्व बन जाता है। जो शक्ति काल को यज्ञ रुप में परिणत कर देती है, उसका नाम 'प्रकृति है। इसी का समन्वय प्राप्त कर वह कालपुरुष' अपने कुछ एक प्रदेश से सीमित बनकर कामनाओं के चक्कर में फंस जाता है। एक-एक माया से एक-एक विश्व चक्र उत्पन्न होता है। माया चल अनन्त है अतएव उसमें अनन्त विश्वचक्र है। उसके रोम-रोम में ब्रह्माण्ड समाए हुए

है। अनन्त विश्वाधिष्ठाता कालपुरुष उन सब पर शासन करता है। सात लोक चौदह भुवन सब काल पुरुष' से उत्पन्न हुए हैं। समस्त विश्व चक्रों की उत्पत्ति उसी से हुई है।

अधर्व संहिता का कथन है कि 'तम' के तीन भेद हैं- अनुपारव्य, निरुक्त और अनिरुक्त कालारंग, कोयला आदि पदार्थ निरुतम् है इसलिए कि इनका निर्वचन विश्लेषण भली-भांति किया जा सकता है। आंख मूंदने पर छा जाने वाला अंधकार और घोर अंधियारी रात का अंधकार अनिरुक्ततम है, क्योंकि इसका प्रत्यक्षीकरण तो होता है किन्तु निर्वचन नहीं। 'निरुक्त विश्वसत्ता है और 'अहः काल है, सृष्टि है। 'अनिरुक्त रात्रिकाल-प्रलय है । अहोरात्रि की समष्टि विश्व है- यह 'अनुपारव्य' तम है, जो प्रलय काल में अनिरुक्त तम से ढका रहता है। इसी को वेद 'पुरुष' कहते हैं।

तम आसितमसाग्रजहमने प्रकेतम्। सलिलं सर्वमा इदम्।
तुच्छये नाम्ब पिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिना जायतकम्।।

जो विश्वात्तीत अनुपाख्यतम है, वही कालपुरुष' है। यह विश्वाभाव रूप है अतएव सत् रूप होने पर भी ज्ञान चक्षुओं से अतीत है, इसलिए ऋषियों ने उसे असत्' कहा है।

यहां पर असत का अर्थ अभाव नहीं बल्कि विश्व काल में यह इसमें विलक्षण किन्तु सत् है-

असदेवेदमन आसीत । तत् सदासीत् ।

कथमसतः सज्जायेत् । तत् सममवत् ।।

तद् अण्डं निरवर्तत्।।

वहीं असत् किन्तु सत् कालपुरुष महामाया से घिर जाता है। वह अपरिमित है, वहां पर कोई अभाव नहीं, कोई कामना नहीं, वह आप्त काम है, किन्तु उसी का माया प्रदेश जब सीमित हो जाता है तो वह आप्त काम न रह कर कामनामय बन जाता है। उसकी

कामना का 'एको हं बहुस्याम' यही रूप है। माया बल के अव्यवहित उत्तर काल में उसका हृदय बल (केन्द्र शक्ति) उत्पन्न होता है। उसके उत्पन्न होने पर वही रसबलात्मक तत्व कामनामय होकर 'मन' यह नाम धारण कर लेता है। कामना या इच्छा मन का व्यापार है।

'हत्प्रतिष्ठयदजिरं (यजुर्वेद) के अनुसार मन हृदय में ही प्रतिष्ठित रहता है और कामस्तदने समवर्तताधि मनसोरेतः प्रथमं यदासीत् (ऋग्वेद) के अनुसार सबसे पहले इस मन से विश्वरेत (शुक्ल) भूत कामना का उदय होता है। उसकी इस कामना से पच्थन् क्रम से

पहले वेद नाम के पुरज्जन का प्रादुर्भाव होता है। वेद चार प्रकार के है- ऋग, यजु:साम और अथर्य । त्रयीवेद अग्निवेद है और अथर्व सोमवेद है। त्रयीवेद स्वायम्भुव ब्रह्म है और अथर्व पारमेष्ठयसु ब्रह्म है। ब्रह्म आग्नेय होने से पुरुष है और सुब्रह्म सौम्य होने से स्त्री है। त्रयी ब्रह्म के मध्य पतित यजुः भाग में यतच्नदो तत्व है। यत् गति तत्व है। यह

प्राण और वायु नाम से प्रसिद्ध है। प्राण, वाक - ब्रह्माकाश रूप स्थिति गति तत्य की समष्टि यजुर्वेद है। प्राण रूप यत्' से काम, तप से वाक, ज भाग से सर्वप्रथम जल उत्पन्न होता है। इसी की व्याख्या शतपथ ब्राह्मण में मिलती है- सो पसृजत वाच एवं लोकात् वागेवमासृजत् । त्रयी ब्रह्म के वाक भाग से उत्पन्न इसी आप तत्व का नाम अथर्ववेद है। यजुः रूप स्वायम्भुखा का पसीना ही अथर्थरुप सुब्रह्म है शतपथ का वचन है कि-

अयमेवाकाशे जू: यदिदमन्तरिक्षं तदेतद्यजुवयुश्चान्तरिक्षच्च यच्च जूश्च तस्माबजु

तदेतयजुः ऋक्सामयोः प्रतिष्ठज्ञ। ऋकस्तमेवहतः।।

इस प्रकार ऋक, यजुः साम यत' 'जू' भेद से अग्निवेद चतुष्फल हो जाता है।

दूसरा आपोमय सोम अथर्व है। यह भृगु और अंगिरा भेद से दो भागों में विभक्त है। धन- तरल-विरल-इन तीन अवस्थाओं के कारण भृगु आप, वायु और सोम इन तीन अवस्थाओं में परिणत हो जाता है। इस प्रकार आपो वेद षट्कल हो जाता है। भृगु-

अंडिरा रूप आपो वेद के साथ चतुष्फल त्रयीवेद का समन्वय होता है-

आपो भृग्वंडिरो रूपमापो मृग्वंडिरो'यम्।

अन्तरेते त्रयो वेदा मृगृरंडिरसः श्रिताः ।।

उक्त धकल सुब्रह्म सौम्य होने से स्त्री है और आग्नेय चतुष्फल त्रयी ब्रह्म पुरुष है। दोनों के मिलन से ब्रह्म-सब्रह्मात्मक विराट् पुरुष का जन्म होता है। वह वेदमूर्ति पूर्ण पुरुष अपने आपको इन्हीं दो भागों में विभक्त कर विराट को उत्पन्न करता है-

द्विधा कृतात्मनो देहमर्द्धन पुरुषो भवत् ।

अर्द्धेन नारी तस्यां स विराजमसृजत प्रमुः।।

दशाक्षर विराट-शतपथ ब्राह्मण में दशाक्षर वै विराट कह कर बताया गया है कि ऋक, साम, यत-जू, आप, वायु, सोम, यम, अग्नि और दशकल बन जाता है।

अग्नि-सोम रुप ब्रह्म-सुब्रह्म के मिलन से उत्पन्न होने वाला यह विराट पुरुष यज्ञ पुरुष है। इसी से सारी सृष्टि की उत्पत्ति होती है। इसलिए इसे 'प्रजापति विश्व विद्या को निगम-आगम के आधार पर दशावयव माना जाना उपयुक्त है। इन्हीं को दश दशाह आदि नामों से भी पुकारा जाता है-

यज्ञो वै दश होता दशाक्षरा वै विराट् यज्ञ उवै प्रजापतिः प्रजापति वैदशहोता अन्तो ना एष यज्ञस्य यदशममाह प्रतिष्ठा दशमहः एतद्वै कृत्स्नगन्नाघं यद् विराट विराट् विरमणाद् विराजनाद् वा 'न्यूनाद वा इमाः प्रजाः प्रजायनते-

शतपथ ब्राह्मण के इस वाक्य के अनुसार न्यून विराट् से ही सृष्टि की उत्पत्ति होती है। तात्पर्य यह कि पुरुष और स्त्री के संयोग से सृष्टि होती है, न कि पुरुष-पुरुष या नारी-नारी के मिलन से। पुरुष आग्नेय है और स्त्री सौम्य है, इसलिए सौम्य होने के कारण स्त्री आग्नेय पुरुष की भोग्या होती है। भोक्ता, भोग्या से प्रथल होता है। इसलिए स्त्री पुरुष की अपेक्षा न्यून होती है। इस न्यून संबंध से ही प्रजाओं की उत्पत्ति होती है। निष्कर्ष यह निकला कि दशाक्षर पूर्ण विराट से सृष्टि नहीं होती है, नवाक्षर के न्यून विराट से ही सृष्टि होती है। एक अक्षर कम हो जाने

पर भी विराट का विराटत्व अक्षत बना रहता है-

न वै एकेनाक्षरेण छन्दांसि वियन्ति न द्वाभ्याम् ।।

सर्वप्रथम कुछ भी नहीं था, केवल शून्य बिन्दु मात्र था। बिन्दु का अर्थ पूर्ण है। यह बिन्दु उन ब्रह्मक्षरों का पहला रुप है जिनसे नव अक्षर का विराट उत्पन्न होता है। पहले केवल शून्य था, उस शून्य से –ये नौ संख्याएं विकसित हुई है। नव पर संख्या समाप्त हो जाती है। 9 पर संख्या समाप्त होने पर शून्य के साथ 1 का संबंध जोड़ने से 10 संख्या बनती है। पुनः एक-एक संख्या का संबंध जोड़ने से क्रमश:

11.12 आदि संख्याएं बनती है। 9 पर संख्या समाप्त होने के कारण 9 का संकलन-फल समान आता है।1-2-3 आदि किसी संख्या का संकलन फल समान नहीं आता, अन्ततः १ ही शेष रह जाता है। दसवां वही महत्वपूर्ण है। वही महाकाल नाम का विश्वातीत

परात्पर है। उस शून्य रूप पूर्ण पुरुष के उदर में नवां अक्षर विराट् रूप यज्ञ पुरुष समाया हुआ है। उसी पूर्ण रूप को दसवां प्रतिष्ठा नाम का अहः बतलाया गया है। इसी पूर्ण ब्रह्म का निरूपण श्रुति इस प्रकार करती है -

यस्मात् परं नापरमस्ति किंचित् ।

यस्मात्रणीयो न ज्यायो'स्तिकिंच्चित् ।।

वृक्ष इवस्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्ण पुरुषेण सवंय।।

दस (10) संख्या में एक अंक स्वतंत्र विभाग है, वही बिन्दु है और १ का जो विभाग है वही विराट् है। यही दस संख्या का वैज्ञानिक रहस्य है। इस वैज्ञानिक विवेचन से सिद्ध है, कि वेदोक्त सृष्टि विद्या दस भागों में विभक्त है। एक ही 'पुरुष' दस पुरुष बन रहा है। पुरुष प्रकृति से संबंद्ध है, इसलिए निगम मूलक आगम शास्त्र सृष्टि विद्यारूपा इन दस शक्तियों का निरूपण करता है। वहीं शक्तिप्रपञ्च दसमहाविद्यानाम से प्रख्यात है।

दीक्षाकाल

यन्त्र मन्त्र तन्त्रादि की साधना केवल पुस्तकीय ज्ञान पर ही नहीं करनी चाहिए। इसके लिए साधनेच्छुक को सद्गुरु की शरण में जाना श्रेयस्कर है। सद्गुरु को प्राप्त करने के उपरान्त पहले दीक्षा लेना अथवा दिक्षीत होना अनिवार्य होता है। श्री काली विलास तन्त्र के छठे पटल में दीक्षा काल का निर्णय इस प्रकार दिया गया है-

फाल्गुने सिते पक्षे या कृष्णाख्या पंचमी मवेत् ।

यदि माग्यवशात् स्वाती शुक्रवार समन्विता।।

तत्र या क्रियते दीक्षा कोटि दीक्षा फलं लभेत् ।

अवणा ऋक्ष संयुक्ता यदिमाग्यवशाद् मवेत ।।

चतुर्दशी शुक्ल युक्ता सातिथिः सर्वदायिनी।

बुधवारेण सहिता आर्दा ऋक्ष समन्विता ।।

शुक्ला च नवमी नित्या वरदा श्री प्रदायिनी।

यत्प्रोक्तं सर्व तन्त्रेषु अघुना कथयामि ते ।।

अर्थात फाल्गुन मास के कृष्ण या शुक्ल पक्ष में यदि पचमी तिथि हो और भाग्यवश स्वाती नक्षत्र तथा शुक्र का दिन हो तो उस मुहूर्त में दीक्षा लेने से कोटि दीक्षाओं का फल मिलता है, यदि श्रवण नक्षत्र ही भाग्यवश मिले तो वह भी अत्युत्तम होता है। शुक्ल पक्ष चतुर्दशी तिथि भी सर्वसिद्धि प्रदायक होती है। बुध के दिन आर्द्रा नक्षत्र तथा शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि समस्त एस्वर्यो को प्रदान करती है।

गुरु का लक्षण

सुन्दरः सुमुखः स्वच्छः सुलमो बहु तन्त्र वित् ।

असंशयः संशयच्छिन्निरपेक्षो गुरुर्मतः।।

सौन्दर्य भनवद्यत्वं रूपे सौ सुख्यता पुनः।

स्मेर पूर्वामिभाषित्वं स्वच्छता जिह वृत्तिता।।

सौलम्यमप्यगर्वित्वं सन्तोषी बहुतन्त्रता।

असंशय स्तत्व बोधे बच्छक्ति प्रतिपादनात् ।।

नैरपेक्ष्यमवित्तेच्छा गुरुत्वं हितवादिता।

एवं विधो गुरुयस्त्विरः शिष्यदुः खदः।।

अर्थात सुन्दर (स्वभाव वाला) सुमुख (अनिन्ध सुन्दर मोहक आकृति वाला) स्वच्छ (साफ-सुथरा रहने वाला तथा पवित्रता आदि पर विशेष ध्यान देने वाला) सुलभ (सहज ही प्राप्य) बहुत से तन्त्रों का ज्ञाता संशय (सन्देह) रहित, संदेहों का निराकरण करने

वाला, किसी भी प्रकार की कोई भी अपेक्षा न करने वाला ही गुरु कहलाता है। अनिन्द्य (निष्कलंक) सौन्दर्यवान, जिसके रुप को देखकर ही सुखाभास हो, स्मेर (मन्द हास्य, युक्त मन्द मन्द मुस्कराने वाला) स्वच्छता और अकुटिलता युक्त, सुलभ रहने वाला, गर्व रहित, सन्तोषी बहुत से तन्त्रों का विद्वान, संशय रहित, तत्व बोधी एवं तत्व की शक्ति का प्रतिपादक कर्ता, किसी भी प्रकार का लोभ न करने वाला, निरपेक्ष, गुरुत्व युक्त, शिष्य का कल्याण चाहने वाला, इस प्रकार का गुरु ही वास्तव में गुरु करने योग्य है। इन लक्षणों से रहित गुरु शिष्य के लिये दुःखदायी होता है।

शिष्य का लक्षण

चतुर्मिराद्यैः संयुक्तः श्रद्धावान् सुस्थिराशयः ।

अलुब्धः स्थिर गात्रश्च प्रेक्षाकारी जितेन्द्रियः ।।

आस्तिको दृढभक्तिश्च गुरौ मन्त्रे सदैवते ।

एवं विधो मवेच्छिध्य स्तिकतरो दुःखकृद्गुरोः।।

गुरुच्यमाने वचने दद्यादित्थं वचः सदा।

प्रसीद नाथ। देवेति तथेति च कृतादरम्।।

प्रणम्योपविशेत् पार्श्वे, तथा मच्छेदनुज्ञया।

मुखावलोकी सेवेत कुर्यादादिष्टमादरात्।।

असत्यं न बदेदग्रे, न बहु प्रलपेदपि।

कामं क्रोधं तथा लोभ मानं प्रहसनं स्तुतिम्।।

चापलानि च जिह्मानि, नईणि परिदेवनम्।

ऋणदानं तथादानं वस्तूनां क्रय विक्रयम्।।

न कुर्याद गुरुणा सार्द्धः शिष्यो भूष्णु कदाचन।

यतो गुरुः शिवः साक्षातं स्तुवन् प्रणमन् मजेत्।।

प्रथम चार श्लोकों में बताये गए लक्षण शिष्य में होने चाहिए। इनके अतिरिक्त शिष्य को श्रद्धावान तथा स्थिर आशय वाला, लोभ रहित, गात्रों (अंगों) को स्थिर रखने वाला, वाली भक्ति होनी चाहिए। गुरु मंत्र और देवता एक ही हैं। ऐसा ही शिष्य, शिष्य है

अन्यथा गुरु के लिए दुःखदायी होता है। गुरु के कहे हुए वचनों पर ध्यान देने वाला, हे नाथ हे देव!! मुझ पर प्रसन्न हो इस प्रकार आदर सहित वचन बोलने वाला, गुरु को प्रणाम कर गुरु के निकट बैठे तथा गुरु की आज्ञा पाने पर ही अन्यत्र कहीं

भी जाय। गुरु के मुख की भाव भंगिमाओं का अवलोकन कर तदनुसार ही कार्य करे, गुरु की प्रत्येक आज्ञा का आदर पूर्वक पालन करें। गुरु के सामने कभी असत्य न बोले न अधिक वार्तालाप करे। काम-क्रोध, लोभ-मोह, मान, प्रहसन, स्तुति, चपलता, कुटिलता, मजाक

आमोद-प्रमोद, ऋण देना, ऋण लेना, वस्तुओं का क्रय-विक्रय, गुरु के साथ कभी न करें। शिष्य को इन बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए, क्योंकि गुरु साक्षात् शिव है। अतः उन्हें सदैव प्रणाम करते हुए उनकी सेवा में सतत लगा रहे।

यथा देवे तथा मन्त्रे, यथा मन्त्र तथा गुरौ।

यथा गुरौ तथा स्वात्मन्येषं मक्तिक्रमः प्रिये ।।

गुरोस्तु जन्म दिवसे, कुर्यादुत्सवमादरात् ।

विशेष पूजां योगिभ्यो भोजनं तत्पदार्चनम् ।।

व्याप्ते दूर गते पूज्यं पूजयेदग्रजादिषु ।

एक देशे नित्य सेवा दूरस्थे योजन क्रमात् ।।

एकादिऋतु संवृद्धया, वर्षे शङ्योजनान्तरे।

ततो दूर गते सेवा तदाज्ञा परिपालनम्।।

आसनं शयन वस्त्रं भूषणं पादूकां तथा।

छायां कलत्र मन्यच्च यत्स्येष्टं तु पूजयेत् ।।

एक ग्रामे पृथक, पूजां न कुर्यादननुज्ञया।

पूजा मध्ये समायाते पूज्ये न त्वा स्थितिं वदेत् ।।

विधेहि शेष नित्युक्तः कुर्यान्नोचेत्तदाज्ञया।

वर्तेत सो पि तच्छेषं कुर्यान्निश्चल मानसः ।।

पूजा मध्ये गुरौ पूज्ये, त्वन्येवापि समागते।

कृत्येमेव समुद्दिष्टं, मौनं तैर्न समाचरेत् ।।

गुरु न मर्त्य बुध्येत यदि बुध्येत तस्य तु ।

न कदापि भवेत् सिद्धिर्मन्त्रैर्वा देव पूजनैः।।

भगवान शंकर श्री पार्वती जी से कहते हैं कि हे प्रिये! जिस प्रकार की भक्ति देवता के प्रति की जाती है, उसी प्रका र की भक्ति मन्त्र के प्रति करे और जिस प्रकार की भक्ति मन्त्र के प्रति की जाती है, उसी प्रकार की भवित गुरु के प्रति करें तथा जिस प्रकार की भक्ति गुरु के प्रति की जाती है, उसी प्रकार की भक्ति अपने आत्मा के प्रति करें यह भक्ति काम है। शिष्य को चाहिए कि गुरु के जन्मदिवस पर अतीव श्रद्धा के साथ उत्सव करें और गुरु की विशेष पूजा के साथ योगियों को भोजन करवाये ताकि उन योगियों के भी चरणों का अर्चन करें। गुरु के दूर देश में व्याप्त होने पर अन्य अग्रजों का पूजन करें। यदि

गुरु और शिष्य एक ही स्थान पर है तो नित्य सेवा करें । गुरु यदि एक योजन के अन्तर में है तो भी नित्य सेवा करें। यदि छह योजन दूरी पर गुरु है तो प्रत्येक ऋतु में एक बार पूजन करें। उससे भी दूर होने पर गुरु की आज्ञानुसार कार्य करें। गुरु के आसन-शयन-वस्त्र, आभूषण व पादुका, चित्र आश्रम अथवा जो भी

इष्ट हो उसकी पूजा करें। एक ग्राम में रहकर बिना गुरु की आज्ञा के पृथक पूजा न करें। पूजा के मध्य में पूज्य के आ जाने पर प्रणाम कर यथा स्थिति बतावे. फिर शेष पूजा करें। निश्चल मन से गुरु की शेष पूजा करें। इन कृत्यों को करते समय मौन न रहे गुरु को मरण शील न समझे यदि गुरु को मरणशील समझता है तो उसे कभी देव पूजन से या मन्त्र जप से सिद्धी नहीं मिलती।

साधना में हवन का महत्व

हमारा जीवन वेगमय और निरन्तर परिर्वतनशील है। नित नए संघर्ष घात-प्रतिघात का सामना करना पड़ता है। एक समस्या हटी नहीं कि दूसरी समस्या सामने आ जाती है और सभी परिस्थितियों को अपने सापेक्ष बनाना आसान नहीं होता। समय कम है ओर चाह उपलब्धियों की आकांक्षा अधिक है, तब क्या सम्भव है एक लम्बी साधना पद्धति द्वारा

उन विपरीत परिस्थितियों को अपने सापेक्ष बनाया जाए ? नहीं क्योंकि आप एक समस्या को अपने सापेक्ष बनाएंगे, तो दूसरी सामने तैयार खडी मिलेगी कभी धन की समस्या के रुप में, कभी पुत्री के विवाह की अड़चन के रूप में, तो कभी पुत्र की बेरोजगारी के रुप में अनेकों समस्याएं सामने खड़ी रहती हैं।

उन परिस्थितियों में हमें कुछ उपायों की आवश्यकता होती है, जिससे कुछ ही समय में ज्यादा से ज्यादा उपलब्धियों को प्राप्त कर सकें। इसके लिए साधना क्रम के साथ-साथ यदि हम यज्ञ को इसमें शामिल कर लें, हा विपरीत प्रभावों को अपने सापेक्ष बनाने में ज्यादा अनुकूलता मिलती है, और यह क्रिया हमारे पूर्वज करते रहें इसीलिए उनका जीवन ज्यादा सुखकर

और आनन्दमय रहा है। यज्ञ-विधान को पूर्णतः सम्पन्न करने के लिए यज्ञ-कुण्डों का विशेष महत्व माना जाता है । ये कुण्ड आठ प्रकार के होते हैं, जिनका प्रयोग विशेष प्रयोजन हेतु ही किया जाता है। हर यज्ञ-कुण्ड की अपनी अलग-अलग महत्ता होती है, और उसी के अनुरूप ही व्यक्ति को उस यज्ञ का लाभ प्राप्त होता है। जीवन में धन, वैभव, शत्रु संहार, विश्व शांति, पुत्र-प्राप्ति और विजय-प्राप्ति आदि कार्यों के लिए अलग-अलग कुण्डों का महत्व शास्त्रों में प्रतिपादित किया गया है, जो निम्नलिखित है-

कुण्ड

योनि का आकार लिए यह कुण्ड कुछ-कुछ पान के पत्ते के आकार जैसा बनाया जाता है, जिसका एक सिरा अर्द्धचन्द्राकार होता है तथा दूसरा त्रिकोणाकार होता है। इस तरह के कुण्ड का प्रयोग सुन्दर, स्वस्थ, तेजस्वी व वीर पुत्र की प्राप्ति हेतु ही किया जाता है।

राजा दशरथ ने भी पुत्र प्राप्ति के लिए इसी कुण्ड पर पुत्रेष्टि प्रयोग सम्पन्न कर राम लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न की प्राप्ति की थी।

अर्द्धचन्द्राकार कुण्ड का महत्त्व

इस कुण्ड का आकार अर्द्धचन्द्राकार रूप में होता है। पारिवारिक जीवन की समस्याओं के निराकरण जीवन की सनस्याओं के निराकरण के लिए सुखमय जीवन की प्राप्ति के लिए इस कुण्ड

का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के कुण्ड में आहुति पति-पत्नी दोनों को मिलकर देना अनिवार्य माना जाता है।

त्रिकोण कुण्ड का महत्त्व

त्रिभुज के आकार में इस कुण्ड का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार के कुण्डमा प्रयोग शत्रुओं को परास्त कर उन पर विजय प्राप्ति हेतु किया जाता है। रावण जो बहुत बड़ा तांत्रिक था उसने भी राम पर विजय पाने के लिए इस यज्ञा-कुण्ड का प्रयोग कर उन्हें परास्त करना चाहा था, किन्तु यज्ञ-विधान पुरा न हो पाने के कारण वह युद्ध में विजय न प्राप्त कर सका।

वृत्त कुण्ड का महत्त्व

यह कुण्ड गोलाकृति लिए हुए होता है। जन-कल्याण हेतु देश में शांति बनाये रखने के लिए ही इस प्रकार के यज्ञ-कुण्ड का प्रयोग बड़े-बड़े ऋषियों, मुनियों आदि ने पूर्व काल में किया है, जिससे कि देश में फैले अत्याचार, अशांति और बढ़ते दुष्प्रभावों को समाप्त कर शांति की स्थापना की जा सके।

समअष्टाय कुण्ड का महत्त्व

इस प्रकार के अष्टाकार कुण्ड का प्रयोग रोगों के निराकरण के लिए किया जाता रहा है। जीवन में स्वस्थ, सुन्दर और निरोगी बने रहने के लिए ही इस यज्ञ-कुण्ड का विधान है।

समषडय कुण्ड का महत्त्व

यह कुण्ड छः कोण लिए होता है। इस प्रकार के यज्ञ-कुण्डों का प्रयोग प्राचीन काल में बहुत अधिक होता था, राजा-

महाराजा विच्छेदन क्रिया को सम्पन्न करने के लिए, शत्रुओं में वैमन्त्यता का भाव जाग्रत करने के लिए ही इस प्रकार के कुण्डों का प्रयोग कर यज्ञा-विधान सम्पन्न किया करते थे, जिसके द्वारा वे शत्रु पक्ष की भूमि राज्य आदि को हथिया कर या युद्ध में विजय-प्राप्ति के लिए इस क्रिया को सम्पन्न कर अनेक राज्यों के अधिपति कहलाते थे।

चतुष्कोणास कुण्ड का महत्त्व

चतुवर्ग के इस कुण्ड का प्रयोग सर्व कार्यों की सिद्धि हेतु किया जाता है, अब यह चाहे भौतिक कार्य हो या आध्यात्मिक, दोनों ही प्रकार के कार्यों में इस चतुष्कोणास कुण्ड का प्रयोग कर साधक अपने जीवन में अनुकूलता प्राप्त कर सकता हे।

पदम् कुण्ड का महत्त्व

अठारह भागों में विभक्त कमल के फूल के आकार का यह कुण्ड दिखने में बहुत ही सुन्दर दिखाई देता है, जिसका प्रयोग तीव्रतम प्रहारों व मारण प्रयोगों से बचने हेतु किया जाता है अतः इस यश-कुण्ड पर यज्ञ को पूर्ण विधि-विधान सहित सम्पन्न कर तीव्रतम तांत्रिक प्रभावों से बचा जा सकता है।

संसार में दुःख के मूलकारण-रुद्र, यम, वरुण, निति ये चार देवता है। विविध प्रकार के ज्वर, महामारी, उन्माद आदि आग्नेय (सन्ताप) सम्बन्धी वाला

भारतीय सनातन-धर्मी जगत कोई दिव्य-कार्य (विवाह, यज्ञोपवीत, यात्रा आदि) नहीं करता। इसी चातुर्मास्य में उस निर्गतिका साम्राज्य रहता है। कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी इसकी

अन्तिम अवधि है। अतएव धर्माचार्यों ने इसे नरकचतुर्दशी नामसे व्यक्त किया है। इसी रात्रिको दरिद्रारूपा कमला (लक्ष्मी) का आगमन होता हैं। कार्तिककृष्ण अमावस्या को कन्या का सूर्य रहता है। कन्या राशिगत सूर्य नीच का कहलाता है। इस दिन सौरप्राण मलिन रहता है। एवं रात्रि में तो यह भी नहीं रहता। उधर अमावस्या के कारण चान्द्रज्योतिका भी अभाव है एवं चार मास की दृष्टि से प्रकृति की प्राणमयी अग्निज्योति भी निर्बल हो रही है। त्रीणि ज्योतींषि सचते सपोडशी के अनुसार इस अमावस्या तीनों ही ज्योतियों का अभाव है। अतएव ज्योतिर्मय आत्मा इस दिन हीनवीर्य रहता है। इसी तमभाव के निराकरण के लिये, एवं साथ ही कमलागमन के उपलक्ष्य में ऋषियों ने इस दिन वैध प्रकाश (दीपोवलि) और अग्निक्रीड़ा (आतिशबाजी) करने का आदेश दिया है। कहना यही है कि नितिरूपा धूमावती प्रधानरूप से चातुर्मास्य में रहती है। लक्ष्मी-कामुक मनुष्यों को सदा इसकी स्तुति करते रहना चाहिये।

धूमावती मंत्र प्रयोग

भगवती धूमावती का अष्टाक्षर मंत्र इस प्रकार है-

मंत्र

"धूं धूं घूमावती स्वाहा।।

इसका विनियोग निम्नानुसार है-

विनियोगः

अस्य धूमावती मंत्रस्य पिप्पलाद ऋषि निवृच्छन्दः ज्येष्ठा देवता धूं बीजं स्वाहा।।

शक्तिः धूमावती कीलकं ममाभीष्टसिद्धयर्थे जपे इसके बाद निम्नानुसार न्यास करें-

ऋष्यादिन्यासः

ॐ पिप्पलाद ऋषये नमः शिरसि।

निवृच्छन्द से नमः मुखे।

ज्येष्ठादेवतायै नमः हृदि।

धूं बीजाय नमः गुह्यो।

स्वाहा शक्तये नमः पादयोः।

धूमावती कीलकाय नमः नाभी।

विनियोगाय नमः सर्वांगे।

करन्यासः

ॐ धूं धूं अंगुष्ठाभ्यां नमः।

ॐ धूं तर्जनीभ्यां नमः।

ॐ मा मध्यमाभ्यां नमः।

ॐ वं अनामिकाभ्यां नमः।

ॐ ती कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

ॐ स्वाहा करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादिषडंगन्यासः

ऊँ धूं धूं हदयाय नमः।

ऊँ धूं शिरसे स्वाहा।

ऊँ मा शिखायै वषट्।

ऊँ वं कवचाय हुं।

ॐ ति नेत्रत्रयाय वौषट।

ऊँ स्वाहा अस्त्राय फट्।

ध्यान

"अत्युच्या मलिनाम्बराखिलजनोद्वेगावहा दुर्मना,

रुमामित्रितया विशालदशना सूर्योदरी चन्चला।

प्रस्वेदाम्बुचिता क्षुधाकुलतनुः कृष्णातिरुक्षाप्रमा,

ध्येया मुक्तकचा सदप्रिय कलि—मावतीमन्त्रिणा।"

भगवती धूमावती का स्वरुप विवर्ण है चंचल है और दीर्घ काया है कृष्ण वर्ण है। खुले हुए रुखे केश व विधवाओं जैसा वेश है। कौऐ की ध्वजा वाले रथ में बैठी है।

विरल दंतावती है सूप जैसे हाथ, रुखे नैत्र हैं। देवी भक्तों को वर तथा अभय मुद्रा में बैठी है। रोग, शोक, कलह, दरिद्रता के नाश के लिए मैं आपको प्रणाम करता हूँ।

पीठ पूजा

उक्त प्रकार से ध्यान करने के बाद पीठादि पर बनाये गये सर्वतोभद्र मण्डल में मण्डूकादि से लेकर परतत्त्वान्त पीठदेवताओं को समर्पित कर-

"ॐ मं मण्डूकादि परतत्वान्त पीठ देवताभ्यो नमः

इस मन्त्र द्वारा पीठ-देवताओं की पूजा करके नव-पीठ शक्तियों की निम्नलिखित मन्त्रों से पूजा करें।

पूर्वादि आठ दिशाओं में क्रमशः-

ॐ कामदायै नमः।

ॐ मानदायै नमः।

ॐ नक्तायै नमः।

ॐ मधुरायै नमः।

ॐ मधुराननायै नमः।

ॐ नर्मदायै नमः।

ॐ मोगदायै नमः।

ॐ नन्दायै नमः।

मध्ये-

ॐ प्राणदायै नमः।

उक्त मन्त्रों से पीठ-शक्तियों की पूजा करके स्वर्ण आदि से निर्मित्त यन्त्र तथा मूर्ति को ताम्रपात्र में रख कर, घृत द्वारा उसका

अभ्यंग करके तथा दूध एवं जल द्वारा तपर्यन्त स्नान कराके, स्वच्छ वस्त्र से पोछ कर,

"ॐ धूमावती योगपीठाय नमः।"

इस मन्त्र से पुष्प आदि न आसन देकर पीठ के मध्य में प्रतिष्ठित करके पुनः ध्यान कर मूल-मन्त्र द्वारा मूर्ति की कल्पना करके पाच आदि स पुष्प-दान : उपचारों द्वारा पूजा करके दही से आटा लेकर आवरण- पूजा करावी लाना प्राप्त करने हेतु हाथ में पुष्पाजलि लेकर निम्नलिखित मन्त्र पढे।

"ॐ सविन्मये परे देवि परामृतरसप्रिये।

अनुज्ञां देहि मातस्त्वं परिवाराचनाय मे।

यह पढ़कर पुष्पांजलि दें। फिर षटकोण केसरों में आग्नेय आदि चारों दिशाओं तथा मध्य दिशाओं में षडंग का निम्नानुसार पूजन करें।

घूमावती पूजन यन्त्र

सर्वांग पूजा

ॐ धूं हृदयाय नमः।

ॐ हृदय श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ धूं शिरसे स्वाहा।

ॐ शिरः श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ऊँ मां शिखायै वषट्।

ॐ शिखा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ वं नमः कवचाय हुं।

मूल-मन्त्र का

कवच श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ तिनेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ नेत्र त्रय श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ स्वाहा अस्त्राय फट्।

ॐ अस्त्र श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

उक्त विधि से षडंग-पूजा करके पुष्पांजलि हाथ में लेकर उच्चारण करने के बाद-

"अभीष्टसिद्धि मे देहि शरणागत वत्सले।

भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्।

यह पढ़कर, पुष्पांजलि प्रदान करते हुए 'पूजितास्तर्पितास्सन्तु' कहें।

इसके पश्चात् अष्टदल में पूज्य और पूजक के अन्तराल को पूर्व दिशा मानकर तदानुसार अन्य दिशाओं की कल्पना करके निम्नलिखित मन्त्रों द्वारा पूर्वादि के क्रम से अष्ट-शक्तियों की पूजा करें-

ॐ सुधायै नमः।

क्षुधा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ तृष्णायै नमः।

तृष्णा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ऊँरत्यै नमः।

रति श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

ॐ निद्रायै नमः।

निद्रा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ऊँ निर्वात्यै नमः।

निति श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

ॐ दुर्गत्यै नमः।

दुर्गति श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ रुषायै नमः।

रुषा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ऊँ अक्षमायै नमः।

अक्षमा श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः ।

उक्त विधि से आठ शक्तियों की पूजा कर, हाथ में पुष्पांजलि ले मूलमन्त्र का उच्चारण करने के बाद-

"अभीष्ट सिद्धि मे देहि शरणागत वत्सले।

भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम्।

शह पर पुष्पांजलि प्रदान करते हुए 'पूजिता विचारान्तु कहें।

इसके पश्चात भूपुर में पू.दि से इन्द्र आदि दश दिगपालो या उनके बजाय आदि आयुषों का पूजन कर पुष्पांजलि प्रदान करें।

पुरश्चरण

पूर्वात प्रकार से आचरण पूजा करके धूपदान से नगरकार तक पूजा कर, श्मशान में सर्वथा नग्न होकर मन्त्र जप करें। इसका पुरश्चरण एक लाख जप है। जप का दशांश तिलमिश्रित धृत से होम

तथा होम का दशांश तर्पण, तण का दशांश मार्जन और मान का दशांश ग्राहाण भोजन कराना चाहिए। इस विधि से मन्त्र सिद्धि हो जाता है।

धूमावती यंत्र

काम्य प्रयोग

मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर प्रयोगों को करना चाहिए। ध्यानोपरान्त श्मशान में पहुँचकार एकदम नग्न हो, केवल रात्रि के समय भोजन करने वाला साधक जप के दशांश संख्यानुसार तिल से होम करे। इस प्रकार ज्येष्ठा की पूजा करने के बाद जब मन्त्र सिद्ध हो जाय तब निम्नानुसार काम्य प्रयोग करने चाहिए-

(1) कृष्ण चतुर्दशी के दिन उपवास करके सिर के बाल खुले रखकर तथा नग्न (निर्वस्त्र) होकर शून्य घर में श्मशान में वन में अथवा गुफा में गड्ढे में अथवा पर्वत पर शव के ऊपर बैठकर देवी का ध्यान करते हुए एक लाख की संख्या में मन्त्र-जप करें तत्पश्चात राई में नमक मिलाकर होम करें। इससे साधक के शत्रु शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।

(2) फेत्कारिणी तन्त्र के अनुसार साधक हड्डी के ऊपर मन्त्र लिखकर, उसमें शिवलिंग स्थापित कर मन्त्र-जप करें। शिव को 'अबष्टभ्य' करके शत्रु के

नाम से मन्त्र-जप करना चाहिए।

(3) इस मन्त्र का १००१ की संख्या में जप करने से शत्रु ज्वर पीड़ित होता है। जार की शान्ति पन्चगव्य अथवा जल से होती है।

(4) मन्त्र में शत्रु का नाम लेते हुए. वन में आधीरात के समय एक लाख की संख्या में मन्त्र-जप करने से साधक को मन में उत्साह उत्पन्न होता है। फिर श्मशान की अग्नि में कौए को जलाकर अभिमंत्रित करें तथा उसकी भस्म को लेकर शत्रु के सिर पर फेंके तो तत्काल उच्चाटन होता है।

(5) कृष्णपक्ष में श्मशान की भस्म द्वारा शिवलिंग निर्मित कर, उसके ऊपर शत्रु के नाम से युक्त न्यास करके, उसकी पूजा करें। इससे स्थान में भेसे का रूप

धारण करके, मन्त्र शत्रु का विनाश कर देता है।

6) इस मन्त्र द्वारा अभिमंत्रित भस्म को शत्रु के घर में गाड़ देने से शत्रुका उच्चाटन होता है।

१) श्मशान की भस्म से शिवलिंग निर्मित कर, मन से कर्भ-चिन्तन करता हुआ हे भगवन् ! इस प्रकार निवेदन करके पुष्पादि से पूजन करें तो शत्रु परास्त

होता है।

(८) नीम की पत्ती तथा कौए के पंख एकत्र कर १०८ की संख्या में मन्त्र-जप करें। फिर देवता के नाम से धूप दें तो शत्रुओं में परस्पर विद्वेषण हो जाता है। इसकी शान्ति चिता की लकड़ी की अग्नि में दूध का होम करने से होती है।

(9) स्त्री-रज का धूप प्रदान करने से कालिका गृधृ के रूप में आकर शत्रु को मारती है। इसकी शान्ति निर्माल्य से होती है।

(10) वाराहकर्ण जड़ी की धूप देकर १००८ बार मन्त्र जप करने से भगवती शूकर का स्वरूप धारण कर शत्रु को मार डालती है। इसकी शान्ति पीपल के पत्तों की धूप से होती है।

पन्च द्रव्य, दूध अथवा मधुरत्रय से सभी प्रकार की शान्ति हो जाती है।

धूमावती मंत्र साधना प्रयोग

देवी धूमावती माता स्वभाव से बड़ी उग्र प्रगति की होती हैं इनको चंचला एवं मुक्तकेशी के नाम से भी जाना जाता है। धूमावती माता की साधना करने से मंत्र जाप करने से आपको दरिद्रता से,

रोग से, शत्रुओं से मुक्ति मिलती है। इनका रूप काला होता है। इनको जेष्ठ लक्ष्मी भी कहा जाता है।

माता धूमावती की साधना मंत्र करना सबके बस की बात नहीं होती है जो धैर्यवान होता है वही इस मंत्र में सफलता प्राप्त कर सकता हे। हम अन्य देवी माताओं को देखते हैं कि उनका साज श्रृंगार होता है वह लाल रंग के वस्त्र पहनती है मगर माता धूमावती अकेली है , जिनकी पूजा एक विधवा के रूप में की जाती है यह सफेद वस्त्र धारण करती है इनका वाहन कौवा होता है।

धूमावती माता का जो असर होता है वह शुभ होता है इस संसार में जितने भी क्रोधित ऋषि के नाम हम जानते हैं उन सभी ऋषियों की मूल शक्ति यही धूमावती माता थी इनका क्रोध बड़ा भयानक होता है।

इनकी पूजा आराधना अगर चतुर्मास में किया जाए तो यह काफी ज्यादा प्रसन्न होती है और अपने भक्तों को वह सब कुछ प्रदान करती है जिसके वह हकदार होते हैं। मंत्र शक्ति में इतनी ताकत होती है कि यह आपको इतना अमीर बना देगा कि आप पैसा खर्च करते रहेंगे मगर आपकी धनसंपदा हमेशा एक ही रहेगी।

मगर हां जब भी आप इनकी पूजा करें तो बहुत सावधानी से करें आपकी थोड़ी सी भूल आपको सर्वनाश के पथ पर ला सकती है।

यही है माता धूमावती का वह मंत्र जिसको जाप करके अपने जीवन के दारिद्रयपन को हमेशा के लिए दूर कर सकते हैं एवं

केतु की दशा से मुक्ति पा सकते हैं हमेशा के लिए। माता पार्वती का ही एक और नाम है धूमावती जो धुंए से उत्पन्न हुई है।

जो लोग अभक्ति से माता धूमावती की साधना करते हैं उन पर माता धूमावती रुष्ट हो जाती है और कल्याण करने की जगह अप-कल्याण कर जाती है। इसलिए अगर मन में श्रद्धा न हो तो भूल से भी माता की मंत्र साधना न करें क्योंकि इससे आपको ही हानि पहुचेगी।

मंत्र

ऊं धूं धूं धूमावती ठः ठः।

विधि

इस मंत्र की उपासना के माध्यम से केवल फूल के द्वारा देवी की आराधना करनी चाहिए। देवी थोड़े से चीज़ों से ही प्रसन्न हो जाती है। इस मंत्र के माध्यम से आप देवी धूमावती का यज्ञ भी कर सकते हैं कुछ इस प्रकार से-

यदि आपके ऊपर ऋणों का बोझ है और आपका यह बोझ कम ही नहीं हो रहा है तो नीम की पत्तियों एवं घी के साथ यज्ञ करने से आपके ऊपर से ऋण का बोझ हट जाएगा।

अगर आपके ऊपर गरीबी की छाया काफी सालों से मंडरा रही है तो आप उस छाया से बिल्कुल मुक्ति पा सकते हैं माता धूमावती का यज्ञ गुड़ के माध्यम से करे।

यदि आपके परिवार का कोई सदस्य कारागार में बंदी है तो आप उस सदस्य को कारागार से मुक्त करने के लिए काली मिर्च से हवन कर सकते हैं।

अगर आपके ऊपर कोई संकट मंडरा रहा है तो आप मीठी रोटी एवं घी के साथ यज्ञ करेंगे तो आपके ऊपर आने वाला हर संकट दूर हो जाएगा।

धूमावती माता को प्रसन्न करने की सामग्री में मिट्टी को ही शुद्ध माना जाता था इसलिए माता धूमावती को शुद्ध बर्तनों में ही प्रसाद दें और मिट्टी के बर्तनों से ज्यादा शुद्ध और कुछ नहीं हो सकता है।

आप माता धूमावती को सफेद फूल अर्पित करे, साथ ही सफेद वस्त्र चढ़ाएं माता को क्योंकि धूमावती माता सांज एवं श्रृंगार बिल्कुल भी नहीं करती है।

सामग्री

फलों में आप नारियल, धतूरा, पंचमेवा एवं काजू अर्पित कर सकते हे। आपके अनेक शत्रु है और आपके शत्रुओं के कारण आपकी रातों की नींद खराब हो रही है तो माता धूमावती की मंत्र साधना करिए।

धूमावती शत्रु विनाश मंत्र

ऊं ठ ह्लीं ह्लीं वज्रपातिनिये स्वाहा।।

विधि

इस मंत्र को आपको रूद्राक्ष की माला से अर्ध-रात्रि में जाप करना चाहिए।

अगर आप परिणाम जल्दी चाहते हैं तो श्मशान में जाकर सफेद कपड़े बिछाकर उसके ऊपर बैठकर इस शत्रु विनाश मंत्र का जाप करें।जाप करते समय आपका मुख दक्षिण दिशा की ओर होना चाहिए। कम से कम २१ माला करे।

ऋण मुक्ति का मंत्र (दरिद्रता नाशक मंत्र)

मंत्र

ऊं धूं धूं ह्रीं आं हुं।।

विधि

इस मंत्र को पीपल के वृक्ष के नीचे बैठकर सवा लाख जाप करने से आपको सफलता अवश्य मिलेगी। माता को प्रसन्न करने के लिए एवं ऋणों से मुक्ति पाने के लिए माता को आप खीर का भोग चढ़ाएं एवं सफेद वस्त्र के ऊपर बैठकर मंत्र का जाप उत्तर दिशा की ओर मुख करके जाप करें। कम से कम २१ माला मंत्र जाप करे।

घूमावती गायत्री

"ॐ घूमावत्यै च विध्महे संहारिण्यै च धीमहि । तन्नो धूमा प्रचोदयात् ॥

षडंगन्यास

उक्त मन्त्र का षडंगन्यास' निम्नानुसार है-

ऊँ घूमावत्यै च हृदयाय नमः ।

ऊँ विघ्महे शिरसे स्वाहा।

ऊँ संहारिण्यै च शिखायै वषट् ।

ऊँ धीमहि कवचाय हुम्।

ऊँ तन्नो धूमा नेत्रत्रयाय वौषट् ।

ऊँ प्रचोदयात् स्त्राय फट ।

इसी प्रकार का न्यास भी करना चाहिए।

प्रचंड धूमावती साधना:

प्रचंड भगवती धूमावती तंत्र की सातवीं महाविद्या के रूप में जगत प्रसिद्ध हैं।बगलामुखी सिद्ध पीठ महादेवी के समीप ही भगवती धूमावती का भी सिद्ध स्थान है। मां भगवती धूमावती की साधना विधि इस प्रकार है।

मंत्र:

धूं धूं धूं धूमावती स्वाहा।।

ध्यान मंत्र:

श्यामांगी रक्तनयनां श्याम वस्त्रोत्तरीयकां । वामहस्ते शोधनं च दक्षिणहस्ते च सूर्पकम्।। धृत्वा विकीर्ण केशांश्च धूलि धूसर विग्रहा। लम्बोष्ठी शुभ्र-दशनां लंबमान पयोधराम्।। संलग्न-भूर-युग-युतां कटु दंष्ट्रोष्ठ वल्लभां। कृसरस्तु कुलल्थोत्थं भग्न

भांड तले स्थितिम्।। तिल पिष्ट समायुक्तं मुहुर्मुहुश्च भक्षितं । महिषी श्रुंग ताटकी लंब कर्णाति भीषणाम्।।

सामग्री

सवा लाख मंत्र जाप करे और दक्षिण दिशा की तरफ मुख करके बैठे श्मशान, शिवालय, सिद्धदेवी पीठ या निर्जन स्थान पे समय रात्रि दिन शनिवार अथवा धूम्रावती जयंती के दिन आसन काले रंग का वस्त्र काली धोती और काला कंबल हवन दशांश यज्ञ हवन करे सामग्री में नमक, राई, सरसों, जौ साधना सामग्री सिद्ध अधेर मंत्रों से अभिषिक्त धूमावती यंत्र, काले हकीक की या रुद्राक्ष की माला से मंत्र जाप करे गुड़हल के फूल, तेल का दीपक, नैवेद्य, कपूर एवं पूजन की अन्य आवश्यक सामग्री साधना के दरमियाँन पास ही रखे।

विधि

भय रहित हृदय से नदी या तालाब में स्नान आदि से निवृत्त होकर पूर्ण विधि-विधान से एकाग्र भाव से साधना करें। मंत्र जप की समाप्ति पर दशांश यज्ञ हवन करना चाहिए। किसी विशेष प्रयोजन हेतु यदि आप यह धूमावती साधना अनुष्ठान करने के इच्छुक हैं तो अपनी मनोकामना का संकल्प करें। यह देवी साधक के सभी शत्रुओं का नाश कर देती है। इस देवी का सिद्ध साधक निर्भय हो जाता है। वह हर प्रकार की बाधा, ग्रह संकट, संपत्ति विवाद या रोग पीड़ा से मुक्त रहता है।

श्रीधूमावती कवचम्

श्री पार्वत्युवाचः

सूचावत्यर्चनं शम्भो भुतं निस्तरयो भगा। कवचं श्रोतुमिच्छामि तस्या देव वदत्व श्रीभैरव उवाचः

पृणु देवि परं गुह्यं न प्रकाश्यं कलीयुगे।

कवचं श्री धूमवत्याः शत्रुनिग्रहकारकम् ।2।।

ब्रह्माद्या देवि सततं यदशादरिघातिनः।

योगिनो भवन्ति शत्रुघ्ना यस्या ध्यानप्रभावतः ।।७।।

ॐ अस्य श्री धूमावती कतवस्य पिप्पलाद ऋषि रनुष्टुप्मन्दः

श्री धूमावती देवता धूं बीजं शक्तिः धूमावती कीलकं शत्रु हनने पाठे।

विनियोगः।

ॐ धूं बीजं में शिरः पातु ललाटं सदावतु ।

पूमा नेत्रयुगं पातु वती कौँ सदावतु ।।4।।

दीर्घा तूदरमध्ये तु नाभि मे मलिनाम्बरा।

शूर्पहस्ता पातु गुह्यं रक्षा रक्षतु जानुनी।।5।।

मुख मे पातु भीमाख्या स्वाहा रक्षतु नासिकाम्।

सर्वविद्यावतु कण्ठ विवर्णा बाहुयुग्मकम् ।।6।।

चंचला हृदयं पातु पृष्टा पार्वेसदावतु । घूमहस्ता सदावतु। घूमहस्ता सदा पातु पादौ पातु भयावहा।।

प्रवृद्धरोमा तु भृशं कुटिलां कुटिलेक्षणा।

सुत्पिपासार्दिता देवी भयदा कलहप्रिया।।8।।

सर्वांग पातु मे देवी सर्वशत्रुविनाशिनी।

इति ते कथितं पुण्यं कवचं मुवि दुर्लभम् ।।७।।

न प्रकाश्यं न प्रकाश्यं न प्रकाश्यं कलौ युगे।

पठनीय महादेवि त्रिसन्ध्यं ध्यानतत्परैः |10||

दुष्टाभिचारो देवेशि तद्गात्रं नैव संस्पृशेत् ।

॥इति भैरवी-भैरव सम्वादे घूमावतीतत्वे घूमावती कवचं सम्पूर्णम्।।

श्री घूमावती स्तोत्रम्

प्रातर्या स्यात्कुमारी कुसुमकलिकया जापमाला जपन्ती, मध्याहे प्रौढरूपा विकसितवदना चारुनेत्री निशायाम् । संध्यायां वृद्धरूपा गलितकुचयुगा मुण्डमाला वहन्ती, सा देवी देवदेवी त्रिभुवनजननी कालिका पातु युष्मान् । 1।। बद्धा खट्यांगखेटौ कपिलवरजटामण्डलं पद्मयोनेः, कृत्वा देत्योत्तगांगैः राजमुरसि शिरः शेखरं तायपक्षः। पूर्ण रक्तैः सुराणां यम महिषमहाशृंगमादाय पाणी पायद्वो नन्धमानप्रलयगुदितया भैरवः कालरात्र्याम् ।।2।।

चर्वन्तीमस्थिखण्डं प्रकटकटकटाशब्दरांघातमृग्रं

कुर्वाणा प्रेतमध्ये कहहकहकहाहास्यमुग्रं कृशांगी।

नित्यं नित्यप्राक्ता उमरुडिमडिमान् स्फारयन्ती मुखजं पायान्नश्चण्डिकेयं झझमझमझमाजल्पमाना भ्रमन्ती ।।

३।।   टंटंटंटंटंटाप्रकरटमटमानादघण्टा वहन्ती,   स्फस्फे स्फे स्कारकारा टकटकितहरा। नादसंघटभीमा।

लोलण्मुण्डाग्रमाला   ललहलहलहालोललोलाग्रवाचं,

चर्वन्ती चण्णुण्डं मटमटमटितैश्चर्वयन्ती पुनातु ।।4।।

वामे कर्णे मृगांक प्रलय परिगतं दक्षिणे सूर्यबिम्ब,

कण्ठे नक्षत्रहारं   वरविकटजटाजूटके मुण्डमालाम् ।

स्कन्धे कृत्वोरगेन्द्रध्वजनिकरयुतं ब्रह्माकंकालभारं,

संहारे   धारयन्ती मम हरतु गयं भद्दा भद्रकाली।15।।

तैलाभ्यक्तकवेणी त्रपुमयविलसत्कर्णिकाक्रान्तकर्णा,

लौहेनेकेनं कृत्वा चरणनलिनकामात्मनः पदशोभाम्।

दिग्वासा रासभेन ग्रसति जगदिदं या यवाकर्णपूरा,

वर्षिण्यातिप्रवृद्धा ध्वजविततगुजा सासि देवि त्वमेव ।।6।।

संग्रामे हेतिकृततः सरुधिरदशनैर्यद्भटानां शिरोमिर्गाला

माबद्दय मूर्डिन घ्वजविततमुजा त्वं श्मशाने प्रविष्टा।

दृष्टा भूतप्रभूतैः पृथुतरज घनाबद्धनागेन्द्र कांची

शूलाग्रव्यग्रहस्ता मधुरुधिरसदाताम्रनेत्रा निशायाम् ।।7।।

दंष्ट्रारौदे   मुखेरिंगरतव   विशति   जगद्देवि सर्व क्षणार्धात,   संसारस्यान्तकाले नररुधिरवशाराम्प्लवे घूमधूने।

काली कापालिकी सा शवशयनरता योगिनी योगमुद्रा, रक्ता ऋद्धिः रागास्था मरणभयहरा त्वं शिवा चण्डघण्टा । 18 ।।

घूमावत्यष्टकं पुण्यं सर्वापद्विनिवारकम् ।

यः पठेत्साधको भक्त्या सिद्धिं विंदति वांछिताम् ।।9।।

महापदि महाघोरे महारागे महारणे।

शत्रूच्चाटे मारणादौ जन्तुनां मोहने तथा ।।10।।

पठेत्स्तोत्रमिदं देवि सर्वत्र सिदिमाग्मवेत् ।

देवदानवगन्धर्वा गाराधारापन्नगाः || सिंहगाधादिकाः स रतोत्रस्मरणमात्रतः। दूरादरतरं गानित किं पुनर्मानुषादयः ।।12।। स्तोत्रेणानेन देनेशि किन सिद्गति भूतले। सर्वशान्तिविदेवि अन्ते निर्माणतां ब्रजेत् ।13।। ।।

इत्यूप्याम्नाये घूमावतीस्तोत्रं समाप्तम्।।

श्री धूमावती सहस्त्रनामस्तोत्रम्

श्री भैरव्युवाचः

घूमावत्या धर्मरायाः कथयस्व महेश्वर।

सहयनामस्तोत्रं में सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।।1।।

श्री भैरव उवाचः

शृणु देवि महामाये प्रिये प्राणस्वरूपिणी।

सहयनामस्तोत्रं मे भवशत्रु विनाशनम्।।2।।

ॐ अस्य श्रीघूमावतीसहयनामस्तोत्रस्यं पिप्पलाद ऋषिः

पंक्तिशान्दो धूमावती देवता शत्रुविनिग्रहे पाठे।।
विनियोगः।

घूमाघूमवती धूमा धूमपानपरायणा।

घौता घौतगिरा घानी घूमेश्वर निवासिनी ।।3।।

अनन्तानन्तरुपा च अकाराकाररूपिणी।

आद्या आनन्ददा नन्दा इकारा इन्द्ररूपिणी।।4।।

धनधान्यार्थवाणीदा यशोधर्म प्रियेष्टदा।

भाग्यसौभाग्यभक्तिस्था गृहपर्वतवासिनी ।।5।।

रामरावणसुग्रीवमोहदा हनुमत्प्रिया। वेदशास्त्रपुराणज्ञा ज्योतिश्छन्दःस्वरूपिणी ।।6।। चातुर्यचारुरुचिरा रंजनप्रेम तोषदा। कमलारानसुधावक्त्रा चन्द्रहासा स्मितानना।17।। चतुरा वारुकेशी च चतुर्वर्गप्रदा मुदा।

कला कलाधरा धीरा धारिणी वसुनीरदा।।४।।

हीरा हीरकवर्णामा हरिणायतलोचना।

दम्ममोहोचलोमस्नेहद्वेषहरा परा। 1911 नरदेवकरी रामा रामानन्द मनोहरा। योगमोगक्रोधलोमहरा हरनमस्कृता।। 1011दानमानज्ञानमानपानगानसुखप्रदा।

गजगोश्वप्रदा गंजा भूतिदा मूतनाशिनी 111||

मदमादा तथा बाला वरदा हरवल्लमा।

मगर्मगमया माला मालतीमालना इदा।।12।।

जालवालहालकाल कपालप्रियादिनी। करंजशीलगुंजादया चूतांकूरनिवासिनी ।।13।। पनसरथा पानसक्ता पनशेशकुटुम्बिनी। पावनी पावनाधारापूर्णा पूर्ण मनोरथा। ।।14।। पूत पूतकला पौरा पुराणसुरसुन्दरी।

परेशी परदा पारा परात्मा परमोहिनी।।15।।

जगन्माया जगर्की जगत्कीर्तिर्जन्मयी।

जननी जयिनी जायाजिता जिनजयप्रदा।।16।।

कीर्तिनानध्यानमानदायिनी दानवेश्वरी। काव्यव्याकरणज्ञा काप्रज्ञा प्राज्ञानदायिनी।।17|| विज्ञाज्ञा विन्नजयदा विना विज्ञप्रपूजिता।

परावरेज्या वरदा पारदा शारदा दरा।[18||

दारिणी देवदूती च दमना दमनामदा।

परमज्ञानगम्या च परेशी परगा परा।।19।।

यज्ञा यज्ञप्रदा यनशानकार्य करी शुमा।

शोमिनी शुभ्रमथिनी निशम्मासुरमर्दिनी।।20।।

शाम्भवी शम्मुपत्नी च शम्मुजाया शुमानना।

शांकरी शंकराराध्या सन्ध्या सन्ध्यासुधर्मिणी ।।21।।

शत्रुघ्नी शत्रुहा शत्रुप्रदा शत्रुविनाशिनी।

शैवी शिवालया शैला शैलराजप्रिया रादा ||2211

शर्वरी शंकरी शम्भुः सुधादया सौधवासिनी।

सुगणा गुणरूपा च गौरवी भैरवारवा1123||गोरांगी गौरदेहा च गौरी गुरुमती गुरुः । गौगार्गण्यस्वरूपा च गुणानन्दस्वरूपिणी । 12411 गणेशगणदा गुण्या गुणागौरववांछिता। गणमाता गणाराध्या गणकोटि विनाशिनी ।।25।। दुर्गा दुर्जनहन्त्री च दुर्जनप्रीतिदायिनी । स्वर्गापवर्गदा दात्री दीना दीनदयावती ।।26।। दुर्निरीक्ष्या दुरादुःस्था दौःस्थ्यमंजनकारिणी। श्वेतपाण्डुरकृष्णामा कालदा कालनाशिनी ।।27।। कर्मनर्मकरी ना धर्मा धर्मविनाशिनी । गौरी गौरवदा गोदा गणदा गायनप्रिया ।।28 ।। गंगा भागीरथी भंगा मगा माग्यविवर्द्धिनी। भवानी भवहन्त्री च भैरवी मैरवासमा। 1291। भीमा भीमरवा भैमी भीमानन्द प्रदायिनी।

शरण्या शरणा शम्या शशिनी शंखनाशिनी 113011

गुणा गुणकरी गौणी प्रिया प्रीतिप्रदायिनी।

जनमोहनकी च जगदानन्ददायिनी ।।3111

जिता जाया च विजया विजया जयदायिनी।

कामा काली करालास्या खर्वा खंजा खरागदा।।32||

गर्वा गरुत्मती धर्मा घर्घरा घोरनादिनी।

चराचरी चराराध्या छिन्ना छिन्नमनोरथा। 133 ||

छिन्नमस्ता जया जाप्या जगज्जाया च झर्झरी।

झकारा झीष्कृतिष्टीका टंका टंकारनादिनी ।।34।।

ठीका ठक्कुरठक्कांगी   ठठठंकार दुपण्दुरा।

दुण्डीता राजतीर्णा च तालस्था भ्रमनाशिनी।।35।।

थंकारा थकरादात्री   दीपा दीपविनाशिनी।

धन्या धना धनवती नर्मदा नर्ममोदिनी।।36।।

पद्मा पद्मावती पीता स्फान्ता फूत्कारकारिणी।

फुल्ला ब्रह्ममयी ब्रह्मी ब्रह्मानन्दप्रदायिनी।।37।।

भवाराध्या भवाध्यक्षा भगाली मन्दगामिनी।

मदिरा मदिरेक्षा चशोदा यमपूजिता । 138 ।।

याम्या राम्या रामरूपा रमणी ललितालता।

लंकेश्वरी वाक्प्रदावाच्यासदाश्रमवासिनी ।।39 ।।श्रान्ता शकाररूपा च षकारा खरवाहना। सह्याद्रिरूपा सानन्दा हरिणी हरिरूपिणी ।।40।। हराराध्या बालवा च लवंगप्रेमतोषिता । क्षपाक्षयप्रदा   क्षीरा अकारादिस्वरूपिणी।।41||

कालिका कालमूर्तिश्च कलहा कलहप्रिया।

शिवा शन्दायिनी सौम्या शत्रुनिग्रहकारिणी।।42।।

भवानी मवमूतिश्च शर्वाणी सर्वमंगला।

शत्रुविद्राविणी शैवी   शुम्भासुरविनाशिनी।।43।।

धकारमन्त्ररूपा   च   चूंबीजपरितोषिता।

घनाध्यक्षसुता धीरा घरारूपा घरावती।।44।।

चर्विणों चन्द्रपपूज्या च छन्दोरुपा छटावती।

छाया छायावती स्वच्छा छेदिनी मेदिनी क्षमा।।45।।

बलिनी वर्द्धिनी वन्द्या वेदमाता बुधस्तुता।

धारा धारावती धन्या धर्मदानपरायणा।।46।।

गर्विणी गुरुपूज्या च ज्ञानदात्री गुणान्विता।

धर्मिणी धर्मरूपा च घण्टानादपरायणा।।47।।

घण्टानिनादिनी घूर्णा घूर्णिता घोररूपिणी।

कलिघ्नी कलिदूती च कलिपूज्या कलिप्रिया।।48 ।।

कालनिर्णाशिनी काल्या काव्यदा कालरूपिणी।

वर्षिणी वृष्टिदा वृष्टिर्महावृष्टिनिवारिणी।।4।।

घातिनी घाटिनी घोण्टा घातकी घनरूपिणी।

बूंबीजा पूंजपा नन्दा धूंबीजजपतोषिता ।।50।।

चूंधूंबीजजपासक्ता पूँबीजपरायणा। चूंकारहर्षिणी धूमा धनदा धनगर्विता । 151।। पद्मावती पद्ममाला पजयोनिप्रपूजिता । अपारा पूर्णपूर्णा तु पूर्णिमापरिवन्दिता ।।52 ।। फलदा फलभोक्त्री च फलिनी फलदायिनी। फूत्कारिणी फलावाप्त्री फलमौक्त्री फलान्विता ।।53 ।। वारिणी वारणप्रीता वारिपाथौधिपारगा। विवर्णा धूम्रनयना धूम्राक्षी धूम्ररूपिणी ।।54।। नीति/तिस्वरूपा च नीतिज्ञा नयकोविदा।

तारिणीताररूपा च तत्वज्ञानपरायणा ११५५११स्थूला स्थूलाधरा स्थात्री उत्तमस्थानवासिनी।

स्थूला पद्मपदस्थाना स्थानग्रष्टा स्थलस्थिता।१५६११

शोषिणी शोगिनी शीता शीतपानीयपायिननी।

शारिणी शांखिनी शुद्धा शंखसुरविनाशिनी ।।57 ।।

शर्वरी शर्वरीपूज्या च शर्वरीशप्रपूजिता ।

शर्वरीजागृता योग्या योगिनी योगिवन्दिता ।।58 ||

योगिनीगणसंरोव्या योगिनीयोग गाविता।

योगमार्गरता युक्ता योगमार्गानुसारिणी।।59 ।।

योगमावा योगययुक्ता यामिनीपतिवन्दिता।

अयोग्या योधिनी योद्धी युद्धक विशारदा । 160 ।।

युद्धमार्गरतानन्ता युद्धस्थाननिवासिनी।

सिद्धा सिद्धेश्वरी सिद्धिः सिद्धिगेहनिवासिनी ।।61।।

सिद्धरीतिः सिद्धप्रीतिः सिद्धा सिद्धान्तकारिणी।

सिद्धगम्या सिद्धपूज्या सिद्धवन्द्या सुसिद्धिदा।।62।।

साधिनी साधनप्रीता साध्या साधनकारिणी।

साधनीया साध्यसाध्या साध्यंसघसुशोभिनी।।63 ।।

साध्वी साधुस्वभावा सा साधुसन्तति दायिनी।

साघुपूज्या साधुवन्द्या साधुसन्दर्शनीधता ।।64 ।।

साघुदृष्टा साधुपृष्टा साधुपोषणतत्परा।

सात्विकी सत्वसंसिद्धा सत्वसेव्या सुखोदया। 165।।

सत्ववृद्धिकरी शान्ता सत्वरांहर्षमानसा।

सत्वज्ञाना सत्वविद्या सत्वसिद्धान्तकारिणी।।6611

सत्वबुद्धिः सत्वसिद्धिः सत्वसम्पन्नमानसा।

चारुरूपा चारुदेहा चारुचंचललोचना।।67 ।।

छद्मिनी छद्मसंकल्पा छद्मवार्ता क्षमाप्रिया।

हठिनी हठसम्प्रीतिर्हठवार्ता हठोद्यमा। 168 ।।

हठकार्या हठधर्मा हठकर्मपरायणा।

हठसम्भोगनिरता हठात्काररतिप्रिया ।।69।।

हठसम्भेदिनी हृद्या हृद्यवार्ता हरिप्रिया।

हरिणी हरिणीदृष्टिहरिणीमान्समक्षणा ।।7011

हरिणाक्षी हरिणपा हरिणीगण हर्षदा।

हरिणीगणसंहन्त्री हरिणीहरिपोषिका। 171||

हरिणीमृगयासक्ता हरिणीमान्पुरः सरा।

दीना दीनकृतिर्दूना द्राविणी दविणप्रदा।172।।

द्रविणाचलसम्वासा द्रविता द्रव्यसंयुक्ता।

दीर्घा दीर्घप्रदा दृश्या दर्शनीया दृढाकृतिः।।3।।

दृढा दुष्टमतिर्दुष्टा द्वेषिणी द्वेषिभंजिनी।

दोषिणी दोष्शसंयुक्ता दुष्टशत्रुविनाशिनी ।।74||

देवतार्तिहरा दुष्टदैत्यसंघविदारिणी।

दुष्टदानवहन्त्री च दुष्टदैत्यनिषूदिनी।175||

देवताप्राणदा देवी देवदुर्गतिनाशिनी।

नटनायकरांसेव्या नर्तकी नर्तकप्रिया1176||

नाटयविद्या नाटयकीं नादिनी नादकारिणी।

नवीना नूतना नव्या नवीनवस्त्रधारिणी।।77।।

नव्यभूषा नव्यमाल्या नव्यालंकारशोमिता।

नकारवादिनी नव्या नवमूषणभूषिता ।।78 ।।

नीचमा नीचभूमिर्नीचमार्गगतिर्गतिः । नाथसेव्या नाथभक्ता नाथानन्दप्रदायिनी ।179।। नम्रा नम्रगतिर्नेत्री निदानवाक्यवादिनी। नारीमध्यस्थिता नारी नारीमध्यगतानघा। 18011 नारीप्रीतिर्नराराध्या नरनामप्रकाशिनी । रती रतिप्रिया रम्या रतिप्रेमा रतिप्रदा ।18111 रतिस्थानस्थिताराध्या रतिहर्षप्रदायिनी। रतिरूपा रतिाना रतिरीति सुधारिणी। 182 ||

रतिरासमहाल्लासा रतिरासविहारिणी। रतिकान्तस्तुता राशी राशिरक्षणकारिणी । 183।। अरूपा शुद्धरुपा च सुरुपा रूपगर्विता। रूपयौवनसम्पन्ना रूपराशी रमावती ।18411

रोधिनी रोषिणी रुष्टा रोषिरुद्धा रसप्रदा। मदिनी मदनप्रीता मधुमत्ता मघुप्रदा।185।।

मद्यपा मद्यपध्येयाय मद्यपप्राणरक्षिणी।

मद्यपानन्दात्री च मद्यपप्रेमताषिता।186।।

मद्यपानरता मत्ता पद्यपानविहारिणी।

मदिरा मदिरारक्ता मरिदापानहर्षिणी। 187।।

मदिरापानसन्तुष्टा मदिरापान मोहिनी।

मदिरामानसा मुग्धा माध्वीपा मदिराप्रदा। 188 ।।

माध्वीदानसदानन्दा माध्वीपानरता सदा।

मोदिनी मोदसन्दात्री मुदिता मोदमानसा। 189।।

मोदकी मोददात्री मोदमंगलकारिणी।

मोदकादानरान्तुष्टा मोदकग्रहणक्षमा। 190।।

मोदकालब्धिसंक्रुद्धा मोदमप्राप्तितोषिणी।

मांसादा मांससम्भक्षा मांसमक्षणहर्षिणी। 191।।

मांसपाकपरप्रेमा मांसपाकालयस्थिता।

मत्स्यमांसकृता स्वादामकारपंचकार्चिता। 192।।

मुद्रा मुद्रान्विता माता महामोहामनस्विनी।

मुद्रिका मुद्रिकायुक्ता मुद्रिकाकृतलक्षण। 193।।

मुद्रिकालंकृता माद्री मन्दराचलवासिनी।

मन्दराचलसंसेव्या मन्दराचलभाविनी । 194।।

मन्दध्येयपादाब्जा मन्दरारण्यवासिनी।

मन्दुरावासिनी मन्दा मारिणी मारिका मिता। 195।।

महामारी महामारीशमिनी शवसंस्थिता।

शवमांसकृताहारा श्मशानालयवासिनी।196।।

श्मशानसिद्धिसंहृष्टा श्मशानभवनस्थिता।

श्मशानशयनागारा श्मशानभस्मलेजिता।197।।

श्मशानभस्मभीमांगी श्मशानावासकारिणी।

शामिनी शमनाराध्या शमनस्तुतिवन्दिता । 198 ।।

श्मनाचारसन्तुष्टा शमनागारवासिनी।

शमनस्वामिनी शान्तिः शान्तसज्जनपूजिता। 199 ।।

शान्तापूजापरा शान्ता शान्तागारप्रभोजिनी।

शान्तपूज्या शान्तवन्द्या शान्तग्रहसुधारिणी।।100||

शान्तरूपा शान्तियुक्ता शान्तचन्द्रप्रभामला।

अमला विमलाम्लाना मालतीकुंजवासिनी।101||

मालतीपुष्पसम्प्रीता मालतीपुष्पपूजिता।

महोग्रा महती मध्या मध्यदेशनिवासिनी।102||

मध्यमध्वनिसम्प्रीता मध्यमध्वनिकारिणी।

मध्यमा मध्यमप्रीतिर्मध्यमप्रेमपूरिता।।103 ||

मध्यांगचित्रवसना मध्यखिन्ना महोद्धता।

महेन्द्रसुरसम्पूज्या महेन्द्रपरिवन्दिता ।।104 ||

महेन्द्रजालसंयुक्ता महेन्द्रजालकारिणी।

महेन्द्रमानिता मान्या मानिनीगणमध्यगा|105||

मानिनीमानसंप्रीता मानविध्वंसकारिणी।

मानिन्याकर्षिणी मुक्तिर्मुक्तिदात्री सुमुक्तिदा।110611

मुक्तिद्वेषकरी मूल्यकारिणी मूल्यहारिणी।

निर्मूला मूलसंयुक्ता मूलिनी मूलमन्त्रिणी।107 ||

मूलमन्त्रकृतार्हाद्या मूलमन्त्रार्घ हर्षिणी।

मूलमन्त्रप्रतिष्ठात्री मूलमन्त्रप्र हर्षिणी।।108 ||

मूलमन्त्रप्रसन्नास्या मूलमन्त्रप्र पूजिता।

मूलमन्त्रप्रणेत्रो च मूलमन्त्रकृतार्चना । 1109 ।।

मूलमन्त्र प्रहृष्टात्मा मूलविद्या मलापहा।

विद्याविद्या वटस्था च वटवृक्षनिवासिनी।।11011

वटवृक्षकृतस्थाना वटपूजापरायणा। वटपूजापरिप्रीता वटदर्शनलालसा |1|| वटपूजाकृतालादा वटपूजाविवर्द्धिनी । वशिनी विवशाराध्या वशीकरणमन्त्रिणी ।।11211 वशीकरण सम्प्रीता

वशीकारकसिद्धिदा । बटुका बटुकाराध्या बटुकाहारदायिनी ।।111311 बटुकार्चापरा पूज्या बटुका विवर्द्धिनी। बटुकानन्दकी च बटुकप्राणरक्षिणी ।14।। बटुकेज्याप्रदापारा पारिणी पार्वतीप्रिया। पर्वताग्रकृतावासा पर्वतेन्द्रप्रपूजिता1115 || पार्वतीपतिपूज्या च पार्वतीपति हर्षदा।

पार्वतीपतिबुद्धिस्था पार्वती पति मोहिनी।।16।।

पार्वतीयद्विजाराध्या पर्वतस्था प्रतारिणी।

पद्मला पदिमनी पदमा पद्ममालाविभूषिता । 1117।।

पद्माजाढयपदा पद्ममालालंकृत मस्तका।

पद्मार्चितपदद्वन्द्वा पद्महस्ता पयोधिजा 11118।।

पयोधिपारगंत्री च पयोधिपरि कीर्चिता।

पाथोधिपारगा पूता पल्वलाम्बुप्रतर्पिता 1111911 पल्वलान्तः पयोमग्ना पवमानगतिर्गतिः।

पय पाना पयोदात्री पानीयपरिकांक्षिणी112011

पयोजमालाभरणा मुण्डमाला विभूषणा।

मुण्डिनी मुण्डहन्त्री च मुण्डिता मुण्डशोभिता ।।121।।

मणिमूषा मणिग्रीवा मणिमाला विराजिता।

महामोहा महाशौर्या महामाया महाहवा।।112211

मानवी मानवीपुज्या मनुवंशविवर्द्धिनी।

मठिनी मठसंहन्त्री मठसम्पत्तिहारिणी।।123।।

महाक्रोधवती मूढा मूढ शत्रुविनाशिनी।

पाठीनमोजिनी पूर्णा पूर्ण हारविहारिणी।।124||

प्रलयानलतुल्यामा प्रलया नल रूपिणी।

प्रलयार्णव संमग्ना प्रलयाब्धिविहारिणी ।।125।।

महाप्रलसम्भूता महाप्रलय कारिणी।

महाप्रलय सम्प्रीता महाप्रलय साधिनी।।126।।

महाप्रलयसम्पूज्या महा प्रलय मोदिनी।

छेदिनी छिन्नमुण्डोग्रा छिन्ना छिन्नरुहार्थिनी।।127।।

शत्रुसंछेदिनीछिन्ना क्षोदिनी क्षोद कारिणी।

लक्षिणी लक्षसम्पूज्या लक्षिता लक्षणान्विता |128।।

लक्ष शस्त्रसमा युक्ता लक्षबाणप्रमोचिनी।

लक्षपूजापरा लक्ष्या लक्ष को दण्ड खण्डिनी।।129।।

लक्षकोदण्ड संयुक्ता लक्ष को दण्ड धारिणी।

लक्षलीलालया लम्या लक्षागार निवासिनी।।130।।

लक्षलोभपरा लोला लक्ष भक्तप्र पूजिता।

लोकिनी लोकसम्पूज्या लोकरक्षणकारिणी।131||

लोकवन्दितपादाब्जा लोक मोहन कारिणी।

ललिता लालिता लीना लोकसंहारकारिणी।।132।।

लोकलीलाकरी लोक्या लोक सम्भव कारिणी।

मूतशुद्धिकरी भूतरक्षिणी भूत पोषिणी।133||

भूत वेताल संयुक्ता भूत सेना समावृता।

भूतप्रेत पिशाचादि स्वामिनी भूत पूजिता ।।134।।

डाकिनी शाकिनी डेया डिण्डि माराव कारिणी।

डमरुवाद्य सन्तुष्टा डमरुवाद्य कारिणी।।135।। हूंकार कारिणी होत्री हविनी हवनार्थिनी।

हासिनी हासिनी हास्यहर्षिणी हठवादिनी ।।36।।

अट्टाहासिनी टीका टीका निर्माण कारिणी।

टंकिनी टंकिता टंका टंकामात्र सुवर्णदा।।137।।

टंकारिणी टकाराव्य शत्रुत्रोटन कारिणी।

त्रुटिता त्रुटिरुपा च त्रुटिरान्देह कारिणी ।।38।।

तर्षिणी तृट्परिक्लान्ता सुरक्षामा सुत्परिप्लुता।

अक्षिणी तक्षिणी भिक्षाप्रार्थिनी शत्रुभक्षिणी।।139।।

कांक्षिणी कुट्टिनी क्रूरा कुटि वेश्व वासिनी।

कुट्टिनीकोटिराम्पूज्या कुट्टिनीकुलमार्गिणी।।140।।

कुटिनी कुलसंरक्षा कुट्टिनीकुलरक्षिणी।

कालपाशावृत्ता कन्या कुमारीपूजनप्रिया।।41।।

कौमुदी कौमुदीष्टा करुणादृष्टिरांयुता।

कौतुकाचारनिपुणा कौतुकागार वासिनी। 42।।

काकपक्षधरा काकरक्षिणी काकसंवृता।

काकांकरथसंस्थाना काकांकस्यन्दनस्थिता । ।43||

काकिनी काकदृष्टिश्च काकमक्षण दायिनी।

काकगाता काकयोनिः काकमण्डलमण्डिता।।44||

काकदर्शनरांशीला काक संकीर्ण मन्दिरा।

काध्यानस्थ देहादिध्यानगम्या धमावृता । ।45।।

धनिनी घनिसंसेव्या पनच्छेदन कारिणी।

घुनपुरा पुन्धुराकारा धूम्रलोचनघातिनी।46।।

बूंकारिणी चघू मन्त्रपूजिता धर्मनाशिनी।

धूम्रवर्णा च धूम्राक्षी ग्राक्षासुरघातिनी ।।47।।

बूं बीजजप सन्तुष्टा घूवीज जप मानसा।

चूंबीजजपपूजार्हाँ चूंबीज जप कारिणी।।48 ।।

चीजकर्षिता घृष्या घर्षिणी घृष्टमानसा।

घूलिप्रक्षेप्णिी धूलिव्याप्तधम्मिल्ल धारिणी।49।।

बूंबीजजपमालढया चूं बीज निन्द कान्तका।

धर्मविद्वेषिणी धर्मरक्षिणी धर्मतोषिता।।50।।

धारास्तम्भकरी धर्ता धारावारि विलासिनी।

धांधी धूं धै मन्त्रवर्णा धौधः स्वाहास्वरूपिणी।।51।।
धरित्रीपूजिता घूर्वा धान्यच्छेदन कारिणी।

धिक्कारिणी सुधीपुज्या धागोधाननिवासिनी।।52||

धामोद्यान पयोदात्री धामधूलिप्रघूलिता।

महाध्वनिमती घूया घूपामोदप्रहर्षिणी।।53 ||

धूपादानमति प्रीता धूपदान विनोदिनी।

धीवरीगणराम्पूज्या धीवरीवर दायिनी।।54||

घीवरीगण मध्यस्था धीवरीधाम वासिनी।

धीवरीगणगोत्री च धीवरीगणतोषिाता।।55||

धीवरी धनदात्री च धीवरी प्राण रक्षिणी।

घात्रीशा घातृसम्पूज्या धात्रीवृक्षरामाश्रया । ।56।।

धात्रीपूजनकी च पात्री रोपण कारिणी।

घूम्रपान रताराक्ता धूम्रपानरतेष्टदा। ।57।।

धूम्रपान करा नन्दा धूम्र वर्षण कारिणी।

धन्य शब्द श्रुतिप्रीता घुन्धुकारिरजनचिदा।।58 ।।

धुन्धु कारीष्टरान्दात्री घुन्धुकारिसुमुक्तिदा।

धुन्धुकार्याध्यरूपा धुन्धुकारिदनः स्थिता ।।1591।

धुन्धुकारिहिताकांक्षी धुन्धु कारिहितैषिणी।

धिन्धिमाराविणी ध्यात्री ध्यानगम्या धनार्थिनी। 116011

घोरिणी घोरणप्रीता घोरिणी घोररूपिणी।

धरित्रीरक्षिणी देवी घराप्रलय कारिणी।।161।।

धराधर सुता शेषधारा धरसमद्युति।

घनाध्यक्षा धनप्राप्ति र्द्धनधान्यविवर्द्धिनी।162||

घनाकर्षणकी च धनाहरण कारिणी।

धनच्छेदनकी च धनहीना धनप्रिया।1163।।

घनसंवृद्धि सम्पन्ना धनदानपरायणा।

धनहृष्टा धनपुष्टा दानाध्ययनकारिणी। 16411

घनरक्षा घनप्राणा घनानन्दकरी सदा।

शत्रुहन्त्री शवारुढा शत्रुसंहारकारिणी ।1165।।

शत्रुपक्षक्षति प्रीता शत्रुपक्ष निषूदिनी।

शत्रुग्रीवाच्छिदा छाया शत्रुपद्धति खण्डिनी।।16611

शत्रुप्राणहरा हायया शत्रून्मूलन कारिणी।

शत्रुकार्यविहन्त्री च सांगशत्रुविनाशिनी।167।।
सांगशत्रुकुलोत्री शत्रुसद्मप्रदाहिनी। सांगसायुध सर्वारिसर्वसम्पत्तिनाशिनी।16811

सांगसायुधसर्वांरिदेडगेहप्रवाहिनी। इतीदं घूमरूपिण्याः स्त्रोत्रं नामराहयकम् ।।16।। यः पठेच्छून्यभवने सन्ध्यान्ते यतमानसः । मदिरामोदयुक्तो वै देवीध्यानपरायणा ।।170।। तस्य शत्रुः क्षयं याति यदि शक्रसमोपि वै। भवपाशहरं पुण्यं धूमावत्याः प्रियं महत् ।।171।। स्तोत्र सहयनामाख्यं मम वक्त्राद्विनिर्गतम्। पठेद्वा शृणुयाद्वापि शत्रुघातकरो भवेत् ।। 772|| न देयं पर शिष्यायाभक्ताय प्राणवल्लभे। देयं शिष्याय भक्ताय देवीभक्तपराय च।

इदं रहस्यं परमं दुर्लभं दुष्टचेतसाम् । ।173।।

इति श्री भैरवी तन्त्रे भैरवी भैरव सम्बादे

घूमावती सहस्त्रनामस्तोत्रं समाप्तम्।।

श्रीधूमावती हृदयम्

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीधूमावतीहृदय स्तोत्रमन्त्रस्य पिप्पलाद ऋषिरनुष्टुच्छन्दः

श्री घूमावती देवता धूं बीजं ही शक्तिः क्लीं कीलकं सर्वशत्रु संहरणे पाठे विनियोगः।

हृदयादि षडंगन्यासः

ॐधां हृदयाय नमः ।1।

ॐधी शिरसे स्वाहा ।2।

ॐ धूं शिखयै वषट् ।

ॐ धें कवचाच हुम् ।4।

ॐधौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।5।

ॐघः अस्त्राय फट् ।6।

इति हृदयादिषडंगन्यासः।

एवं करन्यासः।

अथ ध्यानमः ॐ धूम्राभां धूम्रवस्त्री प्रकटितदशनां मुक्तवालाम्बरादयां, काकांकस्यन्दनस्थां धवलकरयुगां शूर्पहस्तातिरुक्षाम् । नित्य सुत्क्षामदेहां मुहुरतिकुटिलां वारिवांछाविचित्रां ध्यायेद्धूमावती वानयनयुगलां भीतिदा भीषणास्याम् ।। कल्पादौ या कालिकाद्या चीकलन्मधुकैटभौ। कल्पान्ते त्रिजगत्सर्व धूमावतीं भजामि ताम् ।।2।। गुणागारा गम्यगुणा या गुणागुणवर्धिनी। गीता वेदार्थतत्वज्ञैर्धूमावती भजामि ताम् ।।3।। खट्वांगधारिणी खर्वा खण्डिनी खलरक्षसाम्। धारिणी खेटकस्यापि धूमावतीं भजामि ताम्।। 4।। घूर्णघूर्णकरा घोरा घूणिताक्षी घनस्वना।

घातिनी घातकानां या धूमावतीं भजामि ताम् ।।5।।

चर्वन्तीमस्थि खण्डानां चण्डमुण्ड विदारिणीम्।

चण्डाट्टहासिनी देवी भजे धूमावतीमहम् ।।6।।

छिन्नग्रीवां क्षताच्छन्नां छिन्नमस्तस्वरुपिणीम् ।

छेदिनीं दुष्टसंघानां भजे धूमावतीमहम् ।।7।।

जाता या याचिता देवैरसुराणां विघातिनी।

जल्पन्ती बहु गर्जन्ती भजे तां घूम्ररूपिणीम् ।।8।।

झंकारकारिणी झंझा झंझमाझमवादिनीम्।

झटित्याकर्षिणी देवीं भजे धूमावतीमहम् ।।9।।

टीप टंकार सम्युक्तां धनुष्टंकारकारिणीम्।

घोरां घनघटाटोपां वंदे धूमावती महम् ।।10।।

टंठंठमनुप्रीति ठाठः मन्त्र स्वरूपिणीम् ।

ठमकाबगति प्रीतां भजे धूमावतीमहम्।।11।।

डमरु डिंडिमारावां डाकिनी गणमण्डिताम्।

डाकिनीभोग सन्तुष्टां भजे घूमावतीमहम् ।।12।।

ढक्कानादेन सन्तुष्टां ढक्कावाद सिद्धिदात् ।

ढक्कावाद चलच्चित्तां मजे घूमावतीमहम् ।।13।।

तत्ववार्ता प्रिय प्राणां भवपाथोर्धि तारिणीम्।

तार स्वरूपिणी तारां भजे धूमावतीमहम् ।।14।।

थांथीथूथे मन्त्र रूपां थैथैार्थथः स्वरूपिणीम्।

थकारवर्णसर्वस्वां भजे घूमावतीमहम्।।15।। दुर्गा स्वरूपिणी देवीं दुष्टदानवदारिणीम्।

देवदैत्यकृतध्वंसा वंदे धूमावती महम् ।।16।।

ध्वान्ताकारंघकध्वंसा मुक्त धम्मिल्लधारीरिणीम् ।

धूमधाराप्रमां धीरां मजे धूमावतीमहम्।।17।।

नर्तकीनटन प्रीतां नाटय कर्म विवर्द्धिनीम्।

नारसिंहींनराराध्यां नौमि घूमावतीमहम् ।।18।।

पार्वती पति सम्पूज्या पर्वतोपरिवासिनीम् ।

पद्मारूपां पद्मापूज्यां नौमि धूमावतीमहम् ।।1।।

फूत्कारसहित श्वासां फट्मन्त्र फलदायिनीम्।

फेत्कारिगणसंसेव्या सेवे धूमावती महम् ।।20।।

बलिपूज्यां बलाराध्यां बगलारूपिणीं वराम्।

ब्रह्मादिवंदिताम् विद्यां वंदे घूमावतीमहम् ।।21।।

भव्यरूपां भावाराध्यां मुवनेशीस्वरूपिणीम्।

भक्तभव्यप्रदां देवीं भजे धूमावती महम् ।।22 ||

मायां मधुमती मान्यां मकर ध्वज मानिताम्।

मत्स्यमांसमहास्वादां मन्ये धूमावतीमहत् ।।23।।

योगयज्ञ प्रसन्नास्यां योगिनी परिसेवितामह ।

यशोदां यज्ञफलदां यजे धूमावतीमहम् ।।24।।

रामाराध्यपदद्वन्दां रावणध्वंस कारिणीम्।

रमेशरमी पूज्यामहं घूमावती श्रये ।।25।।

लक्षलीलाकलालक्ष्यां लोक वन्द्य पदाम्बुजाम् ।

लम्बितां बीजोषाढयां वन्दे धूमावतीमहम्।।26।।

बक पूज्यपदाम्मोजां बकध्यान परायणाम्।

बाला बकारि सन्ध्येयां वन्दे धूमावतीमहम् ।।27 ।।

शांकरी शंकर प्राणां संकट ध्वंसकारिणीम्।

शत्रु संहारिणी शुद्धां श्रये धूमावतीमहम् ।।28।।

षडाननारि संहन्त्री षोडशीरुप धारिणीम्।

षाड्रसास्वादिनी सौम्यां सेवे घूमावतीमहम् ।।29 ।।

सुरसेवितपादाब्जां सुरसौख्य प्रदायिनीम् ।

सुन्दरीगण संसेव्या सेवे धूमावतीमहम। 130।।

हेरम्बजननी योग्यां हास्यलास्य विहारिणीम् ।

हारिणी शत्रुसंघानां सेवे धूमावतीमहम् ।।31।।

क्षीरोदतीर सम्वासां क्षीरपान प्रहर्षिताम् ।

क्षणदेशेज्यपादाब्जां सेवे धूमावतीमहम् ।।3211

चतुस्त्रिंशद्वर्णकानां प्रति वर्णादि नामभिः ।

कृतं तु हृदयं स्तोत्रं धूमावत्याः सुसिद्धिदम् ।।33 ।।

यइदं पठति स्तोत्रं पवित्रं पापनाशनम् ।

स प्राप्नोति परां सिद्धि धूमावत्या प्रसादतः । 134।।

पठेन्नेकाग्रचित्तो यो यद्यदिच्छति मानतः।

सत्सर्व   समवालोति सत्यं सत्यं वदाम्यहम्।।35।।

।। इति श्री धूमावती हृदयं समाप्तम् ।।